अनाहत

अंक 4, सत्र-2021

देव संस्कृति विश्वविद्यालय

www.dsvv.ac.in

सूक्ष्म संरक्षण –

• परम पूज्य गुरुदेव एवं वंदनीया माताजी

संरक्षक –

• परम श्रद्धेय कुलाधिपति जी एवं परम श्रद्धेया जीजी जी

मार्गदर्शक मंडल –

• श्री शरद पारधी, मान ० कुलपति देवसंस्कृति विश्वविद्यालय

• डॉ. चिन्मन्य पण्ड्या, मान० प्रति कुलपति देवसंस्कृति विश्वविद्यालय

• श्री बलदाऊ देवांगन, रजिस्ट्रार, देवसंस्कृति विश्वविद्यालय

कुलपिता
पं.श्रीराम शर्मा आचार्य
(1911-1990)

कुलमाता
माता भगवती देवी शर्मा
(1926-1994)

संरक्षक
डॉ.प्रणव पण्ड्या
कुलाधिपति

संरक्षिका
शैलबाला पण्ड्या
प्रमुख गायत्री परिवार

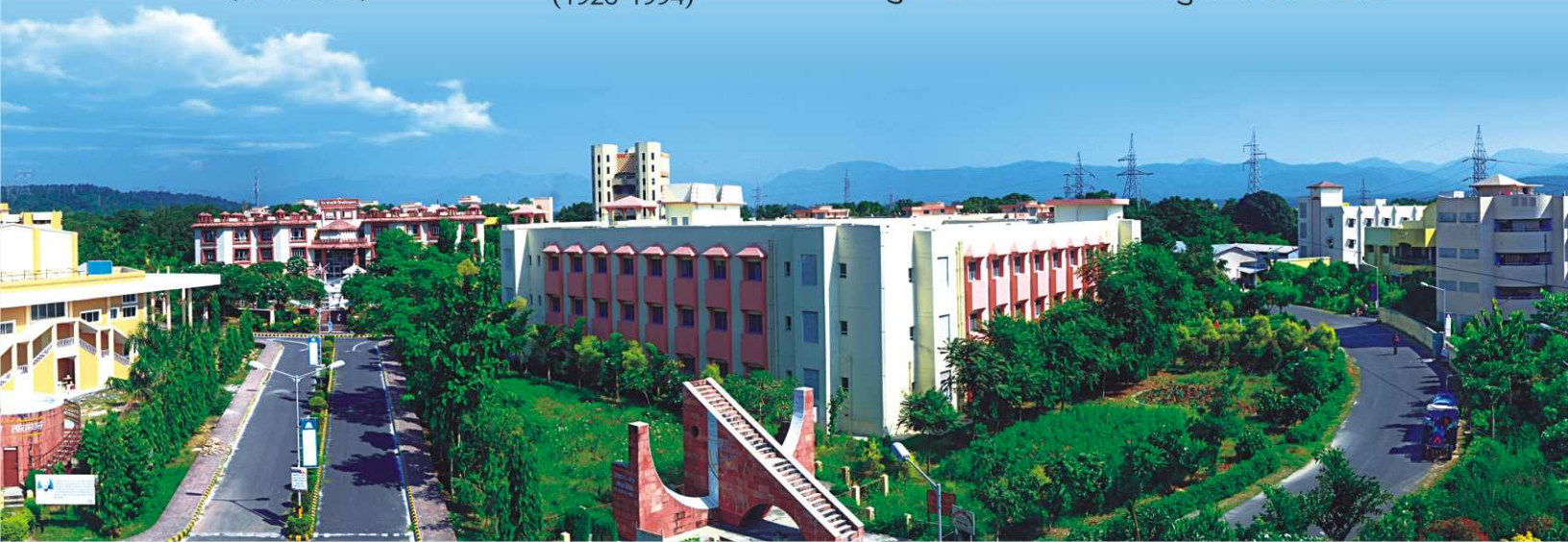

अनुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ
01. सम्पादकीय	**05**
02. श्री सुरेश्वरी देवी हरिद्वार- धार्मिक पर्यटन स्थल, महत्व एवं सम्भावनाएँ - डॉ. अरुणेश पाराशर	**06**
03. माता भूमि पुत्रो अहम् प्रथिव्या - श्री मोहित कुमार	**09**
04. संस्कृति के पुनरूत्थान में सांस्कृतिक पर्यटन की भूमिका - डॉ. उमाकांत इंदौलिया	**11**
05. युग शोधन हेतु मनीषा को निमंत्रण - परम पूज्य गुरुदेव	**13**
06. आस्था के जनसैलाब में - कुम्भ के तलाशते मायने - देवसंस्कृति	**18**
07. संगीत और मनोविज्ञान - एक संक्षिप्त अवलोकन - डॉ. शिवनारायण प्रसाद	**21**
08. हठयोग - एक प्रकृति आधारित स्वास्थ्य प्रणाली - डॉ. असीम कुलश्रेष्ठ	**23**
09. भारतीय संस्कृति का महापर्व - "कुम्भ" - श्री दीपक कुमार	**26**
10. सफलता के सोपान - श्री सुधीर भारद्वाज (काव्य)	**29**
11. इस सोशल डिस्टेंसिंग ने कितना कुछ हमसे छीना है - आरती कैवर्त 'रितु' (काव्य)	**30**
12. यह गुरुधाम हमारा है - श्री उमेश यादव (काव्य)	**31**
13. फिर मत रहियो आंखें फेरे - डॉ. अमृता शुक्ला (काव्य)	**32**
14. नवयुग का जमाना - श्री शोभाराम शशांक (काव्य)	**33**
15. Kumbh – An Untold Saga - Prof. Abhay Saxena	**34**

स्वर्ण जयन्ती वर्ष • गायत्री तीर्थ - शान्तिकुञ्ज

1971-2021

हरिद्वार

सम्पादकीय

प्रस्तुत कालखण्ड उत्साह, उमंग और नवस्फूर्ति को लेकर प्रस्तुत हुआ है। आने वाली नवरात्र की दस्तक मानवीय काया में आस्था, विश्वास और दैवीय अनुदान-वरदान की हुलसन पैदा कर रही है। मातृशक्ति को समर्पित यह नवरात्र, भगवान् राम के जन्म को भी सार्थक करती हुई देखेगी। **"निसिचर हीन करउँ महि भुज उठाइ पन कीन्ह",** यह सिर्फ उद्घोष ही नहीं था वरन् समाज में संव्याप्त अनास्था, अनाचार और अव्यवस्था के समूल नाश के प्रति दृढ़-संकल्प था। सरल शब्दों में यह **"मनुष्य में देवत्व का उदय और धरती पर स्वर्ग के अवतरण"** की चिरस्थायी प्रक्रिया थी, है और सदैव रहेगी।

कुछ ऐसी ही समसामयिक परिस्थिति आज उपस्थित हैं। आस्था - अनास्था की लड़ाई सदियों पुरानी है। दोनों ही वर्ग अपने अनुसार शक्ति, सामर्थ्य और सरंजाम को जुटाने में प्रयासरत हैं। हम मनुष्यों के सामने दोनों विकल्प मौजूद हैं। एक ओर लोकहित, सामाजिक समस्वरता और सामञ्जस्य है तो वहीं दूसरी ओर प्रपञ्च, निकृष्टता और हेय आचरण सीना ताने खड़े हैं। हमारी सार्थकता इसी में है कि इन दोनों विकल्पों में से, श्रेष्ठता का वरण किया जाये। अपने आगमन, अस्तित्व और कर्त्तृत्व को नए आयाम प्रदान दिये जाएँ। वैसे भी इस काय-कुम्भ में अमृत और विष दोनों ही सामान रूप से उपस्थित होते हैं। प्रायः अमृत की अभीप्सा सभी में होती हैं, पर कुछ विरले होते हैं जो इस विष को रचा-पचाकर, शिव-शंकर के स्वरूप में प्रस्तुत होते हैं। ऐसे ही लोग सामाजिक जागरण और भगवत-चेतना के सूत्रधार होते हैं। पूज्य आचार्यश्री को भी ऐसा ही समझें, जिन्होंने अपने स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर को जीवन्त, जागृत तीर्थ बनाया और सभी को अपने ज्ञान-कुम्भ से अभिसिंचित किया।

काय कुम्भ के भी कई स्वरूप हैं। तन का कुम्भ, मन का कुम्भ, आत्मा का कुम्भ, चेतना का कुम्भ, स्थूल, सूक्ष्म और कारण कुम्भ - सभी तो हमारे इर्द-गिर्द सदैव से रहे हैं और इन्हीं वैशेषिक कुम्भों की परिधि में हम जन्म- जन्मान्तरों से गोते लगा रहे हैं। कभी चित्त की शुद्धि को, तो कभी काया से मुक्ति को, यहाँ हर कोई प्रयासरत हैं। कोशिश तो सभी करते हैं पर सफलता सिर्फ उनकी ही चेरी होती है, जो निरन्तर पुरुषार्थ, अनवरत अध्यवसाय और अहर्निश क्रियाशीलता को अपने जीवन का लक्ष्य बनाते हैं। इसे ही अनाहत समझिये - जहाँ चेतना के विभिन्न सोपानों से गुजरकर एक चिरस्थायी शाँति विराजमान है। अनाहत नाद की गूँज शरीर, मन और आत्मा तीनों को एकाकार करती है और सहज समाधि भली साधु को चरितार्थ करती चली जाती है।

अनाहत का चौथा अंक भी इन्हीं उद्देश्यों और पुरुषार्थों को लेकर प्रस्तुत है। प्रस्तुत शब्द और रचना किसी की भी हो, चेतना उसी विराट् ब्रह्म की है। ऋषियुग्म में अपनी सोच और समझ का जब विसर्जन कर दिया, तो फिर अपना क्या रहा? यहाँ तो सिर्फ **"अगुन सगुन दुइ ब्रह्म सरूपा। अकथ अगाध अनादि अनूपा"**, के मर्म को जानने और समझने का महज प्रयास है।

हमें इस ज्ञान की वैतरणी में, गुरु निर्देशों को सम्बल बनाना होगा। विचारणा के इस सागर में, गुरु कार्यों को ही नय्या समझना होगा। पूज्यवर के निर्देशों और आश्वासनों में ही तो हमारी मुक्ति है। यहाँ सिर्फ सोचने भर से कार्य नहीं चलेगा कुछ सार्थक कर गुजरने का माद्दा और पुरुषार्थ ही हमको, हमारे अभीष्ट से मिलाएगा। शान्तिकुञ्ज स्वर्ण जयन्ती वर्ष में व्याख्यानमाला, विभिन्न ज्ञान और कर्म कुम्भ आयोजन, इन्हीं सार्थक संकल्पों का मूर्त रूप है। युग की माँग के अनुसार, हम भी इस वैचारिक पयस्वनी में से कुछ अञ्जलि जल लेकर गुरुचरणों में प्रस्तुत हों, यही मनोभावना हम सभी की होनी चाहिए। इस विषम परिस्थितियों में सभी सुधी पाठकों, परिजनों के उत्तम स्वास्थ्य और मंगलमय जीवन की ऋषिसत्ता से भावभरी प्रार्थना- अभ्यर्थना।

-ब्रह्मवर्चस्

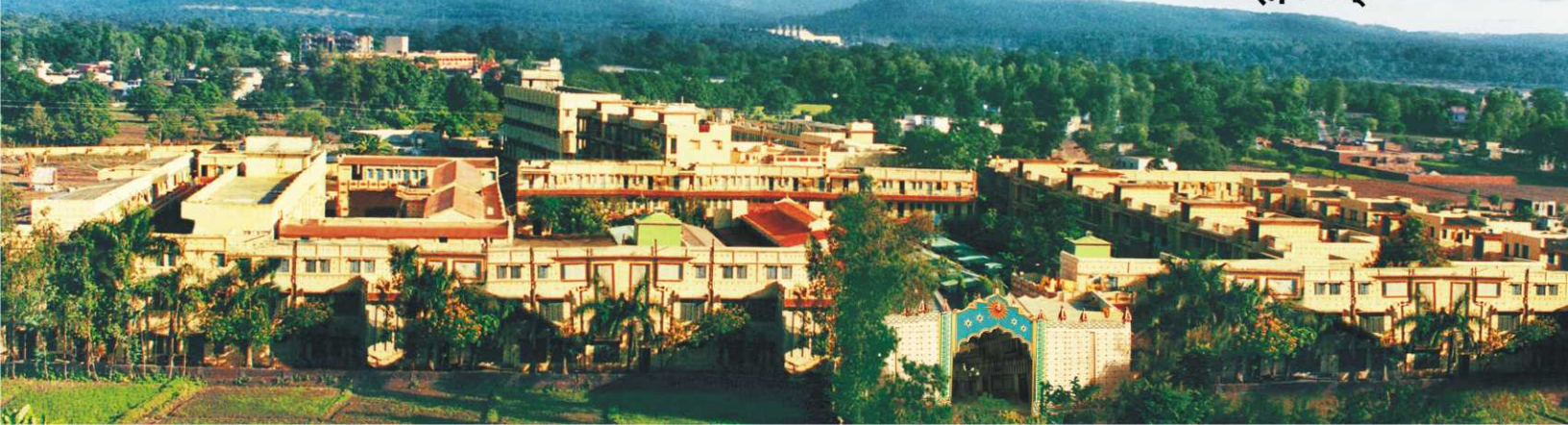

श्री सुरेश्वरी देवी हरिद्वार - धार्मिक पर्यटन स्थल का महत्त्व एवं सम्भावनाएँ

- डॉ. अरुणेश पाराशर, विभागाध्यक्ष, पर्यटन विभाग

श्री सुरेश्वरी देवी सिद्धपीठ हरिद्वार से 8 से 10 किमी. की दूरी पर, राजाजी राष्ट्रीय पार्क के हरिद्वार रेंज में स्थित है। इस मन्दिर तक जाने के लिए वन में प्रवेश करना पड़ता है। वन विभाग की अनुमति भी इस हेतु आवश्यक है। भारत हैवी इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड के मुख्य द्वार के समीप सेक्टर 5 जंगल चौकी से 1.5 किमी. दूर शिवालिक पर्वतमाला के मध्य में स्थित, यह प्राकृतिक सुन्दरता के साथ आध्यात्मिक व धार्मिक जिज्ञासुओं को अपनी ओर आकर्षित करता है। यह एकदम शान्त वातावरण में स्थित एक प्राकृतिक व आनन्दमय स्थल लगता है। वन विभाग की ओर से यहाँ दिन के समय में भ्रमण किया जा सकता है। छोटी गाड़ी को लेकर इस स्थल की यात्रा की जा सकती है। वन के अन्दर पक्की रोड बनी हुई है। आते-जाते समय मोर- हिरन आदि पशुओं के दर्शन आसानी से हो जाते हैं। रात के समय हाथियों के निकलने से यह स्थल खतरनाक भी है। अतः रात्रि में इस स्थल पर जाना वर्जित है।

श्री सिद्धपीठ सुरेश्वरी देवी के बारे में बहुत सी जनश्रुतियाँ प्रचलित हैं। यह कहा जाता है कि माँ की लीला इस स्थल पर सम्पन्न हुई थी। यह पहाड़ी क्षेत्र है, अतः माँ शिव के साथ यहाँ निवास करती है। मन्दिर के पुजारी जी के अनुसार नवरात्र में यहाँ माँ का वाहन शेर देखा जा सकता है। सम्पूर्ण परिसर सुरम्य व सुन्दर प्रकृति की खूबसूरती से आप्लावित है। प्रकृति के दृश्य किसी भी साधक का ध्यान बरबस अपनी ओर खींच ही लेते हैं। साधकों के अनुसार यह एक गुप्त तांत्रिक स्थल भी है और यहाँ कई प्रकार की साधनाएँ की जा सकती है।

"सर्वमंगले मांगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोस्तुते।।"

मार्कण्डेय पुराण के अष्टोतर अध्याय में माँ का ध्यान करके ''ध्यात्वा देवी सुरेश्वरी'' का वर्णन आता है। अर्थात् माँ को हृदय से मानने वाला ही सम्पूर्ण सिद्धियाँ प्राप्त करता है। इन्हीं माँ सुरेश्वरी देवी का वर्णन स्कन्दपुराण के केदारखण्ड में मिलता है। भगवान् स्कन्द के अनुसार - गंगा जी के पश्चिम भाग में सुरकुट नामक पर्वत पर शार्दुल पर आरूढ माँ सुरेश्वरी देवी निवास करती हैं। इनके दर्शन के लिए नवरात्र की अष्टमी, नवमी, चतुर्दशी आदि की तिथियों की अर्द्ध रात्रि को स्वयं देवता तक आते हैं। इस समय हिंसक पशु भी माँ की भक्ति में भक्तिमय हो जाते हैं। एक संगीत की धारा बह पड़ती है और इस संगीत को साधक अपने हृदय स्थल पर महसूस करता है। वेद, पुराण इत्यादि में देवभूमि उत्तराखण्ड के आध्यात्मिक और धार्मिक वातावरण के बारे में सुन्दर ढंग से समझाया गया है। यहाँ के शक्तिपीठों, सिद्धपीठों, आश्रमों, आरण्यकों का रोचक वर्णन पुरातन साहित्य में प्राप्त होता है। जब कनखल में दक्ष प्रजापति के यहाँ, भगवान् शंकर का अपमान हुआ, तो सती देवी ने अपने प्राणों की आहुति दे दी। भगवान् जब उनके शरीर को लेकर उड़े, तो जहाँ-जहाँ माता के अंग गिरे; वह स्थान शक्तिपीठ कहलाये एवं जहाँ इनकी लीलाएँ सम्पन्न हुईं वे स्थल सिद्धपीठ कहलाए। इन सभी में श्री सुरेश्वरी देवी की गणना प्राचीन एवं प्रसिद्ध सिद्धपीठों में की जाती है।

इसका वर्णन करते हुए भगवान् स्कन्द कहते हैं कि जब इन्द्र देव को परेशानी हुई, तब देवगुरु बृहस्पति जी के आदेश पर भगवान् विष्णु की आराधना की गयी। भगवान् विष्णु प्रसन्न होकर कहते हैं कि-

वर्षते मेघरूपेण तपते सूर्यरूपतः।
शोषिते वायुरूपेण क्लेदते जलरूपतः।।
सैव सर्वकरी देवीं तां भजस्वभयापहाय।
नारायणी हिमवतः शुभे केदारमण्डले।।

अर्थात् - माँ ही इस सृष्टि की रचना, पालन व विनाश करती हैं। माँ की महिमा अपरम्पार है। इस तरह माँ का वर्णन उत्तराखण्ड में बहुत ही अपनेपन से किया जाता है। नन्दादेवी राजजात की यात्रा हर 12 साल बाद होती है। उसमें भी नन्दा का तात्पर्य शक्ति से ही लगाया जाता है। माँ पार्वती का

हिमालय उत्तराखण्ड के पहाड़ों से सम्बन्ध जोड़ा जाता है। यहाँ माँ का मायके(माँ का घर) स्थान माना जाता है। भगवान् विष्णु इन्द्र से कहते हैं कि गंगा के पश्चिमी भाग में जाकर सर्वदुखों को हरने वाली भय विनाशिनी माँ का ध्यान व भजन करो। इन्द्र से प्रसन्न होकर माँ ने उन्हें वर दिया और कहा कि यह स्थल सम्पूर्ण कामनाओं की पूर्ति करने के रूप में प्रसिद्ध होगा। जो तन, मन एवं निश्छल भाव से मेरी अराधना करेगा, उसकी सभी कामनाएँ पूर्ण होंगी। इसके बाद ही यह स्थल श्री सुरेश्वरी देवी के नाम से विख्यात हुआ एवं महादेव को सुरेश्वर कहा जाने लगा।

श्री सुरेश्वरी देवी का आध्यात्मिक दृष्टि से सर्वाधिक महत्व है। ऋषि नारद देवाधिदेव से कहते है आप इस बारे में वर्णन करिये। स्कन्द पुराण के केदारखण्ड में बहुत ही विस्तारपूर्वक इसके माहात्म्य का वर्णन है। पृथ्वी पर जितने तीर्थ हैं उनमें स्नान करने के बराबर ही इसका महत्व है। यहाँ के पुण्यकर्म से परब्रह्म की प्राप्ति होती है। ये समस्त सिद्धियाँ प्रदान करती हैं। इस प्रकार माँ सुरेश्वरी देवी सर्व-विपत्ति नाश करने वाली शक्ति के रूप में महिमा मंडित की गयी है। उत्तराखण्ड के कुछ प्राचीन साहित्यों में भी माँ सुरेश्वरी देवी का वर्णन मिलता है। श्री दुर्गासप्तशती में भी माँ की महिमा का वर्णन प्राप्त होता है।

मंदिर- माँ का मुख्य मन्दिर मध्य में स्थित है। पूरा परिसर पहाड़ की तलहटी में बसा हुआ है। माँ के सौम्य रूप के दर्शन इस मन्दिर में होते हैं। यहाँ श्रीगणेश जी, श्रीहनुमान जी एवं श्रीकार्तिकेय जी की भी मूर्तियाँ हैं। माँ के मुख्य मन्दिर में आध्यात्मिक धाराओं का अहसास किया जा सकता है। इस परिसर में मन स्वतः ही शान्त हो जाता है। सुन्दर व सुरम्य वातावरण में यह मन्दिर सभी साधकों की अराधना का प्राचीन स्थल है। इस स्थल पर प्रकृति की सुन्दरता के साथ नीरवता व शान्ति, सभी के मन को शीतलता प्रदान करती है।

सुरेश्वर शिवलिंग- मुख्य मन्दिर के पहले एक शिवलिंग भी है। इसे ही सुरेश्वर महादेव कहा जाता है। इस शिवलिंग से मुख्य मन्दिर के दर्शन भी होते हैं।

माँ काली मंदिर- मुख्य मन्दिर से ऊपर की ओर जाकर माँ काली के दर्शन भी किये जा सकते हैं। पूरा परिसर बहुत ही सुन्दर ढंग से सुसज्जित किया गया है। प्रकृति के बीच में यह मन्दिर अद्भुत आभा प्रदर्शित करता है।

आस-पास के दर्शनीय स्थल –

1. विल्वकेश्वर धाम –

विल्वकेश्वर धाम माँ की प्रसिद्ध तपःस्थली है। कहा जाता है कि यहाँ माँ पार्वती ने विल्व (वेल) के पत्ते खाकर भगवान् की आराधना की थी। इसी कारण इस शिवालिक पर्वत को विल्वपर्वत भी कहा जाता है। यहाँ शिवलिंग पर नियमित अभिषेक होता है। पूरा मन्दिर वन प्रदेश के द्वार पर स्थित होने के कारण सुरम्य व शांत है। ललताराव पुल से यह स्थल 1 किमी की दूरी पर स्थित है। नियमित यज्ञ- हवन भी इस स्थल की अपनी विशेषता है।

2. राजाजी पार्क –

राजाजी पार्क का एक हिस्सा बी.एच.ई.एल. रानीपुर क्षेत्र में आता है। वर्तमान समय में यहाँ वन विभाग के माध्यम से जंगल सफारी भी की जा सकती है। वन विभाग की सफारी हेतु सरकारी रेट फिक्स है। इस वन में हिरन, वारहसिंगा, हाथी एवं मोर, विभिन्न पक्षियों के साथ नीलगाय के भी दर्शन हो जाते हैं।

3. दक्ष प्रजापति मन्दिर -

कनखल हरिद्वार शहर से बिलकुल सटा हुआ है। कनखल के विशेष आकर्षण प्रजापति मंदिर, सती का कुण्ड एवं दक्ष महादेव मन्दिर है। कनखल आश्रमों तथा विश्व प्रसिद्ध गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय के लिए भी जाना जाता है। कनखल गंगा के पश्चिमी किनारे पर स्थित है। नगर के दक्षिण में दक्ष प्रजापति का भव्य मन्दिर है जिसके निकट सतीघाट के नाम से वह भूमि है जहाँ पुराणों के अनुसार शिव ने सती के प्राणोत्सर्ग के पश्चात्, दक्षयज्ञ का ध्वंस किया था। यह हिंदुओं का एक पुण्य तीर्थ स्थल है जहाँ प्रति वर्ष लाखों तीर्थयात्री दर्शानार्थ आते हैं।

4. हर की पौड़ी / चण्डी देवी मन्दिर-

हर की पौड़ी के विषय में कहा जाता है कि राजा विक्रमादित्य के भाई मातृहरि ने इसी स्थान पर तपस्या कर अमर पद प्राप्त किया। इन्हीं की स्मृति में राजा विक्रमादित्य ने यहाँ पर पैड़ियों का निर्माण कराया, जिसके कारण यह स्थल हर की पौड़ी के नाम प्रसिद्ध हुआ। इसी जगह पर प्रसिद्ध ब्रह्मकुण्ड भी है, जिसमें समुद्र मंथन के समय अमृत की बूँदें इस जगह पर गिरी। इसी ब्रह्मकुण्ड को कुम्भ पर्व के अवसर पर स्नान के लिए सबसे पुण्यदायी स्थल माना जाता है। चण्डी देवी मन्दिर हरिद्वार में गंगा किनारे नीलपर्वत पर

स्थित है। पौराणिक कथाओं के अनुसार तंत्र-मंत्र की सिद्धिदात्री चण्डी देवी ने इसी स्थान पर शुंभ और निशुंभ नामक असुरों का वध किया था। ऐसा मानते हैं कि चण्डीदेवी मुख्य मूर्ति की स्थापना 8वीं सदी में आदिशंकराचार्य की यह सिद्धपीठ 51 शक्तिपीठों में से एक मानी जाती है। इस मन्दिर के निकट एक हनुमान् जी की माता अञ्जनी देवी का मन्दिर भी स्थित है।

कैसे पहुँचे? -

सड़क मार्ग :

यह दर्शनीय स्थल राजधानी दिल्ली से लगभग 225 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है।

उत्तराखण्ड प्रदेश की राजधानी देहरादून से 65 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है।

रेल मार्ग :

निकटतम रेलवे स्टेशन हरिद्वार जक्शन है जो कि स्थल से 6 किमी की दूरी पर स्थित है। यहाँ से देश के विभिन्न मुख्य शहरों को रेलगाड़ी मिलती है।

वायु मार्ग :

देहरादून के एयर पोर्ट जौलीग्राण्ट से यह स्थल 45 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है।

विकास/ भविष्य की संभावनाऐं -

आध्यात्मिक कुटीर - मन्दिर के पास में आध्यात्मिक कुटीर बनाए जा सकते हैं। उच्च वर्गीय साधकों हेतु इस प्रकार के कुटीर नया अनुभव प्रदान करेंगे। इस स्थल पर रहकर साधक नये-नये अनुभवों को प्राप्तकर सकेंगे।

तप/अनुष्ठान केन्द्र - इस स्तर पर विभिन्न प्रकार के अनुष्ठानों का सञ्चालन किया जा सकता है। विशेषकर नवरात्र में यहाँ सुरक्षा के साथ अनुष्ठानों का आयोजन हो सकता है। तपकेन्द्र के रूप में भी इस स्थल को विकसित किया जा सकता है। वन विभाग एवं पर्यटन विभाग मिलकर टिकाऊ एवं सामञ्जस्यपूर्ण पहल कर सकते है।

ट्रेकिंग - युवा इस स्थल पर ट्रेकिंग भी कर सकते हैं। यहाँ की शिवालिक पर्वतमालाओं में ट्रेकिंग के विभिन्न अवसर विद्यमान है।

वन्य विचरण पक्षी विहार - इस स्थल के आस-पास वन्य विचरण एवं पक्षी विहार को बढ़ावा दिया जा सकता है। इस स्थल पर पक्षियों के कलरव उनके प्राकृतिक संगीत का आनन्द भी जा सकता है।

माता भूमि: पुत्रो अहं पृथिव्या (विश्व पृथ्वी दिवस 2021)

- श्री मोहित कुमार, (शोध छात्र) पर्यावरण विज्ञान विभाग

माता भूमि: पुत्रोऽहं पृथिव्या:"
- (अथर्ववेद, भूमि सूक्त १२ /१/१२)

अथर्ववेद का यह मंत्र सुनकर धरती माता के प्रति अगाध श्रद्धा और समर्पण उभरता है और हो भी क्यों ना? समूचे जगत् में समस्त जीव, चर, अचर को एक दिव्य आभा और स्फूर्ति का मर्म जो धरती माता पढ़ाती हैं। वेदों की निःसृत वाणी सिर्फ प्रेरणा ही नहीं देती, वरन् धरती माँ के लिए कुछ कर गुजरने की हुलसन भी पैदा कर जाती है।

यजुर्वेद के 9वें अध्याय में कहा गया है- **"नमो मात्रे पृथिव्ये, नमो मात्रे पृथिव्या:"**, अर्थात् माता पृथ्वी (मातृभूमि) को नमस्कार है, मातृभूमि को नमस्कार है। धरती माता और मातृ भूमि के प्रति सम्मान को समर्पित यह मनोभाव अन्य किसी देश में नहीं मिलेंगे। पृथ्वी हमारी माता है और हम पृथ्वी के पुत्र हैं।

सौर मण्डल में नौ ग्रह हैं और प्रत्येक गृह की अपनी कुछ न कुछ खूबियाँ भी हैं; लेकिन इन सभी ग्रहों में पृथ्वी ही एक मात्र ऐसा ग्रह है, जिस पर अभी तक मानव जीवन सम्भव है। विश्व पृथ्वी-दिवस को मनाने के पीछे का उद्देश्य पृथ्वी के प्राकृतिक पर्यावरण के लिए सभी को जागरूक करना और पर्यावरण के प्रति मानव की बढ़ती हुई उदासीनता को कम करना ही है। विश्व पृथ्वी-दिवस सन् 1970 से प्रति वर्ष 22 अप्रैल को मनाया जाता है। जिसकी प्रतिवर्ष एक थीम होती है। इस वर्ष की थीम "रीस्टोर अवर अर्थ" है, अपनी पृथ्वी को पुनर्स्थापित करें।

प्रश्न यही कि हम आखिर इस धरती पर क्या पुनर्स्थापित करेंगे? धन, धान्य, सम्पदा, उर्वरकता, खनिज, तेल, प्राकर्तिक संसाधन, ऑक्सीजन सभी कुछ तो इन्सान और प्रकृति संतुलन की आवश्यकता है। और जरा सा इसमें कहीं हेर फेर हुआ, तो सामूहिक विपदा मुँह बाये सामने खड़ी हो जाती है। ऐसा लगता है यह विपदाएँ, मानवीय अस्तित्व की नियमित अन्तराल पर परीक्षा लेती हैं और इन्सानी सोच, समझ और व्यवहार को झकझोर जाती हैं।

जैसा की हम सभी देख रहे हैं कि पूरा विश्व ही सन् 2020 से कोरोना नामक महामारी से गुजर रहा है। इसके लिए देखा जाय तो कहीं न कहीं हम सभी जिम्मेदार हैं। विकास की इस दौड़ में हमने अपने पर्यावरण को इतना दूषित कर दिया है की पीने का शुद्ध पानी नहीं है, खाने का शुद्ध भोजन नहीं है, साँस लेने के लिए शुद्ध वायु नहीं है, टहलने के लिए पार्क नहीं है। सब का सब तहस-नहस कर दिया है। अब हमें सचेत होने का समय आ गया है, अन्यथा इस धरती से समूची मानव जाति का अस्तित्व ही समाप्त हो जायेगा।

जब से कोरोना की दूसरी लहर आई है, तभी से हम सभी लोग देख रहे हैं की पूरे भारतवर्ष में जितने भी अस्पताल थे, उन सभी में प्राणवायु ऑक्सीजन की बड़ी कमी है। सभी

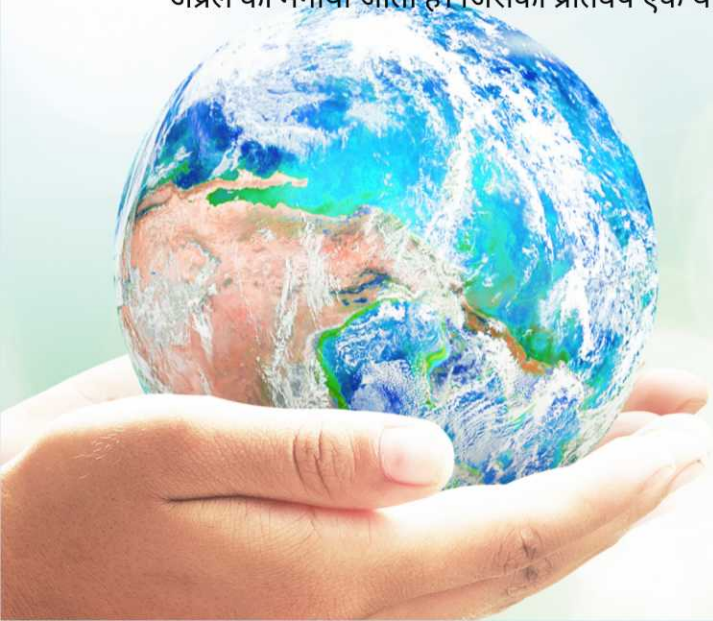

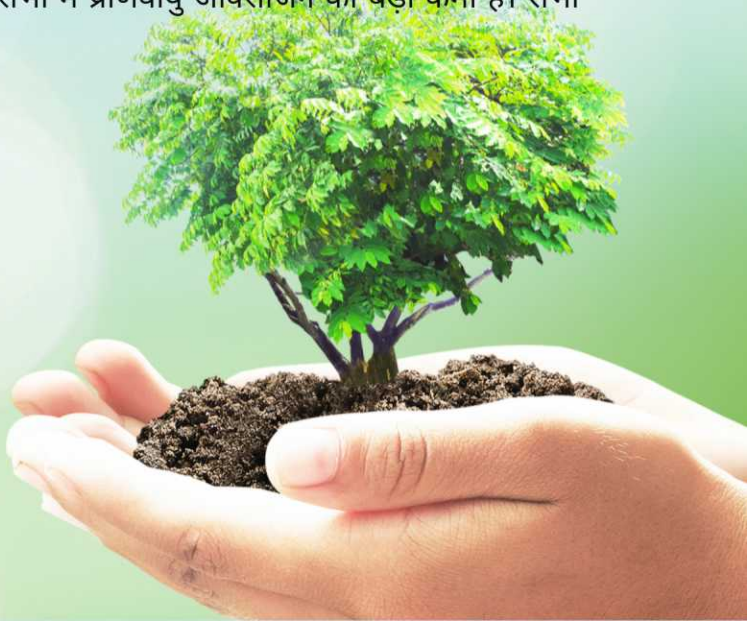

न्यूज चैनल और समाचार पत्रों की हैडलाइन यही है की पूरे भारतवर्ष में ऑक्सीजन की बेहद कमी है। यह स्थिति जब है कि हमारी माँ स्वरुप प्रकृति ने अभी ऑक्सीजन ना तो बनाना बंद किया है और ना ही हमें देना बंद किया है। एक पल के लिए हम सोचें कि अगर ऐसा हुआ तो क्या हमारा जीवन एक पल भी संभव है? नहीं ना। तो क्यों न हम कुछ ऐसा अपने लिए, अपनों के लिए और आने वाली पीढ़ियों के लिए करें कि उनको कम से कम शुद्ध प्राणवायु तो मिल सके। खुली हवा और सुखद उजाले क्या होते हैं? यह आने वाली पीढ़ी तभी जान पायेगी, जब उन्हें ऑक्सीजन मिलेगी। प्रकृति के विद्रूप को रोकने के लिए किसी को तो पहल करनी ही पड़ेगी।

इस पृथ्वी-दिवस से हम यह संकल्प लें कि हम अपने जन्मदिवस पर, विवाहदिवस पर या कोई और शुभ काम होने पर एक फलदार या छायादार पेड़ जरूर लगायेंगे एवं उसके बड़े होने तक देखभाल करेंगे और अपने प्रियजनों, सगे-सम्बन्धियों को उपहार स्वरूप भी एक फलदार या छायादार पेड़ जरूर देंगे। साथ ही धरती माता को हरी चुनर उढ़ायेंगे। हमारे वेद और पुराणों में पञ्चदेव, पञ्चोपचार, पञ्चगव्य, पञ्चपुष्प, पञ्चपल्लव, पञ्चामृत, पञ्चाङ्ग आदि सभी कुछ पाँच के महत्त्व को दर्शाते हैं। आर्ष साहित्य में पञ्चपल्लव का उल्लेख मिलता है, जिसमें आम, पीपल, कदम्ब, जामुन और गूलर के वृक्ष सम्मिलित हैं। इन पेड़ों को लगाने से मनुष्य के ग्रह-नक्षत्र अगर सही नहीं चल रहे हों तो उनकी दिशा और दशा भी ठीक हो जाती है और आने वाले संकट भी टल जाते हैं। पञ्चपल्लव लगाने से नवग्रह की भी शांति होती है।

वेदादि आर्ष साहित्यों का जितना भी अध्ययन करें, उतना ही उसमें नूतन प्रकाश प्रस्फुटित होता है। प्रकृति, वनस्पति और ग्रहों का ऐसा सुन्दर मिलाप, अन्यत्र खोजने से भी नहीं मिलेगा। चाहे इसे प्रकृति-पुरुष का वेदान्त दर्शन कह लें, या फिर इस नैसर्गिक प्रकृति में जीव-जगत् और ब्रह्म के तत्व को ढूँढ़ लें। ज्ञान, कर्म और भक्ति की इस नवीन त्रिवेणी में हर एक की अपनी गति और नियति है। पृथ्वी-दिवस की सार्थकता तभी है, जब हर जीव अपने परमात्मा के प्रति उत्तरदायी हो जाये, अपने कर्तव्य का निर्वहन करने लग जाये और प्रकृति - धरित्री के प्रति श्रद्धा और मैत्री के पथ पर अग्रसर हो। पृथ्वी-दिवस पर आइये एक और सार्थक - सम्मिलित प्रयास करते हैं।

संस्कृति के पुनरुत्थान में सांस्कृतिक पर्यटन की भूमिका

-डॉ. उमाकांत इंदौलिया, विभागाध्यक्ष-पर्यटन प्रबंधन विभाग

भारत देश प्राचीनतम संस्कृति व सभ्यताओं वाला देश है। प्राचीनकाल से भारतवर्ष की सभ्यता व संस्कृति समृद्ध रही है। हमारे देश में सारे संसार की झलक देखी जा सकती है। इसलिए शुरू से ही भारत विदेशी पर्यटकों के लिए आकर्षण का केन्द्र रहा है। हमारे देश में "अतिथि देवो भव" की परम्परा पुरानी रही है। भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठता को लक्ष्य करके प्रसिद्ध उर्दू शायर इकबाल ने अपनी एक कविता 'सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा' में लिखा है कि –

''यूनान मिश्र रोमाँ सब मिट गये जहाँ से,
कुछ बात है कि हस्ती मिटती नही हमारी ।''

देश की प्राचीन संस्कृति व सभ्यता को सांस्कृतिक पर्यटन के द्वारा समाज में प्रस्तुत किया जाता है। इस पर्यटन के द्वारा हमारी समृद्ध तथा विशाल सांस्कृतिक धरोहर को प्रदर्शित किया जाता है। साथ ही पर्यटकों के सामने भारतीय संस्कृति के विभिन्न रूपों को प्रस्तुत कर, दोनों की संस्कृतियों में आदान-प्रदान किया जाता है।

देश के सभी सामाजिक और पर्यटक कार्यक्रमों में संस्कृति का एक महत्वपूर्ण स्थान होता है आम तौर पर इसे दो कोटियों में विभक्त किया जाता है - भौतिक व अभौतिक

संस्कृति। पहली कोटि में कला और शिल्प, स्थापत्य और स्मारक शामिल हैं और दूसरी कोटि में नृत्य, संगीत, धर्म, लोक-जीवन शैली, विचाराधाराएँ और रीतिरिवाजों को रखा जाता है। इन सभी संस्कृति के पहलुओं को सांस्कृतिक पर्यटन द्वारा प्रदर्शित किया जाता है।

भारत के पर्यटन व संस्कृति की समृद्धता व सुन्दरता को देखकर भारत के सम्बन्ध में मार्क टवेन की यह टिप्पणी सार्थक प्रतीत होती है। **''एक ऐसी धरती जिसे देखने की इच्छा सभी की होती है और यदि कोई इसे एक बार देख ले अथवा इसकी झलक भर देख ले, तो वह शेष विश्व के समस्त वैभव के सामने भी इसके आकर्षण को नहीं भुला पायेगा।''** ।

सांस्कृतिक पर्यटन हमारी संस्कृति व सभ्यता के मूल तत्वों जैसे कला, नृत्य, संगीत, ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक धरोहरों, पर्व त्यौहारों, परम्पराओं, रीतिरिवाजों का दिग्दर्शन और विकसित करता है। भारत देश का पर्यटन मंत्रालय व राज्य-पर्यटन मंत्रालय सांस्कृतिक पर्यटन के विकास हेतु और पर्यटकों के आकर्षण के लिए, मुख्य पर्यटक स्थलों पर सांस्कृतिक सन्ध्या, क्राफ्टबाजार, मेलों, लाईट और साउण्ड शो, टूरिज्म फेस्ट आदि कार्यक्रमों का आयोजन करते हैं। इन आयोजनों से न केवल पर्यटक मनोरञ्जन व हमारी संस्कृति का दिग्दर्शन करते हैं; बल्कि इससे रोजगार व विदेशी मुद्रा की आय में वृद्धि हुई है।

इससे पिछड़े इलाकों का सामाजिक - आर्थिक विकास भी हुआ है, साथ ही हमारी सांस्कृतिक धरोहर तथा पर्यावरण संरक्षण को विशेष सहयोग प्राप्त हुआ है। इसके साथ में सांस्कृतिक पर्यटन के विकास हेतु भारत में कई स्थानों पर प्रसिद्ध पर्यटन महोत्सव सरकार द्वारा आयोजित होते हैं जिनकी ख्याति पूरे विश्व में दूर-दूर तक फैली है। इनमें से आगरा में ताजमहोत्सव, अजमेर में पुष्कर मेला, कोणार्क- में नृत्य उत्सव, कुल्लू का दशहरा, खजुराहो महोत्सव, जैसलमेर में थार महोत्सव, ग्वालियर में तानसेन समारोह आदि भव्य आयोजन संस्कृति के विकास में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

वर्तमान में भारत सरकार द्वारा पर्यटन व संस्कृति के विकास के लिए कई योजनाएँ शुरू हुई है। पहली 2015 की स्वदेश दर्शन स्कीम शुरू की गयी, जिसमें 15 सर्किट- बौद्ध, रामायण, हिमालय, कृष्णा, डेजर्ट, आध्यात्मिक आदि का ? चयन हुआ है। इसमें पर्यटन की मूलभूत सुविधाओं के साथ-साथ, पर्यटन विकास हेतु सरकार द्वारा इन योजनाओं में करोड़ों रुपयों की मंजूरी भी दी गई है।

भारत सरकार की अन्य दो योजनाएँ - Prasad and Hriday, सांस्कृतिक पर्यटन के विकास में अपना बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान निभा रही हैं। इन सभी सरकार की योजनाओं द्वारा संस्कृति, क्षेत्र व पर्यटन के विकास को मूर्त रूप दिया जा रहा है। वर्तमान की विकटतम परिस्थितियों में, पूरे विश्व को प्राचीन भारतीय संस्कृति, धर्म सभ्यता, ग्रामीण क्षेत्रों व प्राचीन भारतीय परम्पराओं की ओर मुड़ना होगा। प्रकृति व पर्यावरण के अनूकूल सभी विकास के स्वरूपों को आश्रय देना होगा। प्राचीन संस्कृति के आधारभूत तत्त्वों को अपने जीवन का अभिन्न हिस्सा बनाना होगा; तभी समस्त प्रतिकूल परिस्थितियाँ स्वतः अनुकूल होती चली जाएँगी।

युगशोधन हेतु मनीषा को निमन्त्रण

- पं.श्रीराम शर्मा आचार्य

- **वेदमूर्ति, तपोनिष्ठ पं. श्रीराम शर्मा आचार्य जी ने 23 नवम्बर 1979 को लोककल्याणार्थ जो भावोद्गार व्यक्त किये थे उसकी मूल भावना गुरुवर की धरोहर-प्रथम भाग (पुस्तक) में अविकल प्रस्तुत है। अपने उद्गार में पूज्यवर ने अपने विचार परिकर से यह भावभरा आग्रह किया है कि आप पर सारे समाज का, युग का एक ऋण चढ़ा है, महती दायित्व है उसे निभाइए। आशा करते हैं यह विचारशील पाठकों के लिए मननीय, उत्प्रेरक, ज्ञानवर्द्धक तथा दिशाबोधक सिद्ध होगा।**
- आपने वैभव-विलास की जेल में बहुत जीवन बिता लिया। आप समय दीजिए व अपनी अक्लमन्दी का सही प्रमाण देकर यूगशोधन में खपिए।
- आप युग अनुसन्धान, मानव धर्म की खोज, विज्ञान, अध्यात्म की शोध के विषय के प्रति गम्भीर हैं तो आपको समय देना पड़ेगा।
- इन्टेलिजेंशिया जिस काम के लिए अभी बदनाम है, आप उस बदनामी को मिटाएँ।
- हमें चार सौ करोड़ व्यक्तियों का भाग्य बनाना है, नया युग गढ़ना है, तो हमें दलील की माँ को पकड़ना होगा।
- आदमी की बुद्धि का श्रेष्ठतम भाग है-ऋत। यह हमें मिल जाए तो बुद्धि, विद्या, प्रज्ञा तथा मानव- जीवन सार्थक हो जाती है।

मनुष्य को भगवान् के अनुदान अन्यान्य प्राणियों से भिन्न मिले हैं। सामान्य प्राणी दो काम कर पाते हैं, एक तो अपना पेट भर पाते हैं और दूसरा सन्तान पैदा कर पाते हैं। दो के अलावा और कोई पुरुषार्थ अन्य प्राणियों के जिम्मे नहीं है, किन्तु दूसरी ओर मनुष्य के जिम्मे कैसे-कैसे शानदार अनुदान मिले हैं। अन्य प्राणी तो एक छोटी-सी कल्पना रखते हैं जो ख्वाब के रूप में दिमाग में केवल एक सीमा तक ही काम आती है, जो शरीर की जरूरतों को पूरा करते हैं। उससे आगे उन्हें कोई चिन्ता नहीं होती। चिन्ता की इस परिधि इन प्राणियों में उतनी ही है, जिससे कि शरीर की जरूरतें पूरी कर सकें, चारा इकट्ठा कर सकें, घास खा सकें, दौड़ सकें, बच्चे पैदा कर सकें। बस इससे ज्यादा चेतना नहीं है।

आदमी को अन्य प्राणियों की तुलना में क्या-क्या मिला? शरीर ऐसा शानदार मिला कि कलाकार ने अपनी सारी की सारी कला एक केन्द्र पर खत्म कर दी, ऐसा मालूम पड़ता है। हाथ हमारा शानदार है ऐसा मालूम पड़ता है कि प्रकृति ने इसे बड़ा सोच-समझकर, मन लगाकर बनाया है। इतनी जगह से मुड़ने वाला, इतनी जगह से घूमने वाला, इतने तरह के काम करने वाला हाथ किसी अन्य प्राणी के हिस्से में नहीं आया। दिमाग के बारे में हम क्या कहें? आँखों के लिए क्या कहें? हर इन्द्रिय के लिए क्या कहें? अनोखा प्राणी है मनुष्य। **भगवान् ने इस हाड़-मांस के जखीरे में एक ऐसी चेतना भर दी है, जो अनोखी मालूम पड़ती है। बड़े सौभाग्यशाली हैं हम व आप जो ऐसा शरीर धारण करने में समर्थ हो सके,**

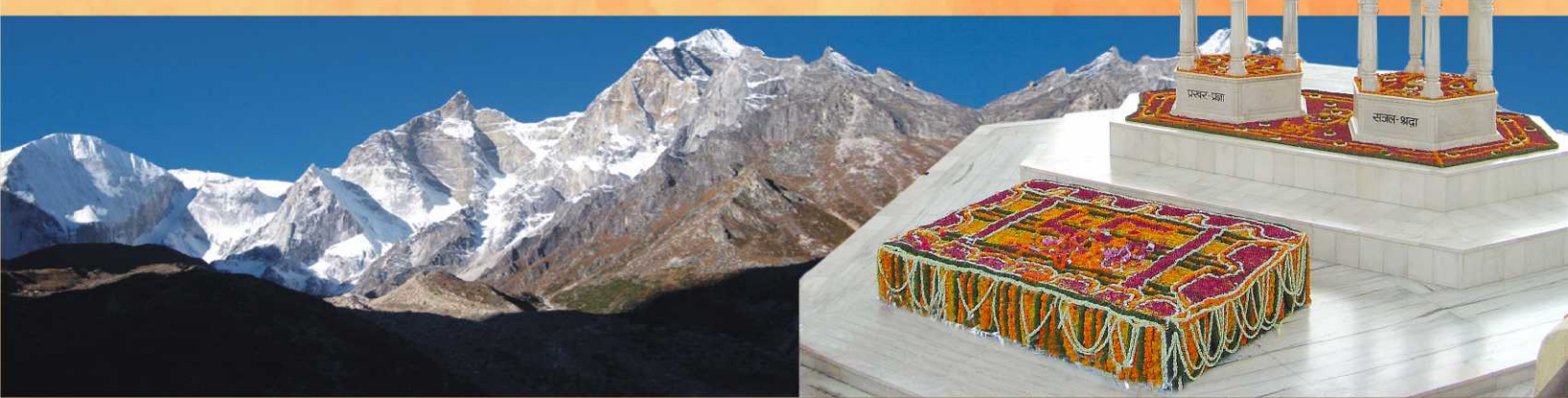

सौभाग्यशाली सिद्ध हो सके। भगवान् का अनुग्रह हम सब पर है कि यह मनुष्य शरीर प्राप्त कर सके।

अगली बात और थोड़ी सुरक्षित रखी है जिसे पात्रता के अनुरूप भगवान् दिया करते हैं। सब प्राणियों को नहीं, किसी-किसी को देते हैं, जिसे सुपात्र पाते हैं। पात्रता आपकी बढ़ेगी, तो भगवान् की चार नियामतें, चार विभूतियाँ आपको मिलती चली जाएँगी। एक विभूति का नाम-ऋत है ऋत क्या है? ऋत उसे कहते हैं, जिससे कई कीमती चीजें जुड़ी हुई हैं, साजो-सुरक्षा, शालीनता-अन्तः प्रेरणा। ऋत जिस किसी के हिस्से में आता है वह अपना कल्याण करता है और अपना कल्याण करके वह सीमित नहीं रह जाता, समाज का उत्तरदायित्व सँभालता है, सारी मनुष्य जाति का मार्गदर्शन करता है और इस पृथ्वी पर खुशहाली लाता है। ऋत उस वर्ग के हिस्से में आता है, जिसको हम सभी ब्राह्मण कहते हैं। ऋत उसे कहते हैं, जिसमें आदमी का चिन्तन और जीवन देवोपम बन जाता है। वह अपने लिए कत्र्तव्यों का निर्धारण करता है। क्या निर्धारण करता है? 'वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिताः।' हम पुरोहित अर्थात् हम ब्राह्मण, हम सन्त, हम ऋषि यह उत्तरदायित्व ग्रहण करते हैं और यह घोषणा करते हैं कि 'वयं' अर्थात् हम सब, 'राष्ट्रे' सारे राष्ट्र को, नागरिकों को, विश्व मानवता को, 'जागृयाम' जीवन्त और जाग्रत रखे रहेंगे। जीवन्त और जाग्रत् रखने की जिम्मेदारी केवल एक ही वर्ग के लोगों की है, जिनका नाम है-ब्राह्मण। देवता और ब्राह्मण एक ही बात है। देवता आसमान में रहते हैं। देवता वे भी हैं जिनके दिमाग आसमान में हैं। बाकी लोगों के दिमाग जमीन पर गड्ढे में, खड्डे-खन्धक में रहते हैं। ब्राह्मण का दिमाग आसमान में रहता है। वह ऊँचा सोचता व ऊँचा ही चिन्तन करता हैं, ऊँचा ही उसका लक्ष्य होता है। ऊँची ही उसकी विचारणा होती है। वैसे ही देव होते हैं। देव ऋत को पा करके, भगवान् का अनुग्रह पा करके अपना कल्याण करते हैं और समाज का हित भी साधते हैं।

'ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत' ऋत से सत्य की, सत्य से तप की उत्पत्ति होती है और तप से गर्मी की उत्पत्ति होती है, जिससे दिन और रात पैदा होते हैं, जिससे संसार की व्यवस्था पैदा होती है। यह भगवान् का अनुग्रह आप में से किन-किन के हिस्से में आया, पता नहीं। पर यह जिस किसी के भी हिस्से में आया होगा, उसे ही बुद्धिजीवी कहेंगे। जो भी सुशिक्षित हैं, बुद्धिजीवी हैं, उनको अगर भगवान् का प्यार मिल जाता है तो पहले मिलता है ऋत। ऋत से वे पहले अपना उद्धार करते हैं और फिर सारे विश्व का उद्धार करते हैं।

दूसरा वाला अनुदान दूसरी श्रेणी के लोगों को मिलता है। उसका नाम है - शौर्य और साहस। तीसरा अनुदान है - साधन और चौथा का नाम है - श्रम। वर्णाश्रम व्यवस्था के हिसाब से यही चार प्रकार के वर्गीकरण हैं। **भगवान् के अनुदान एक के बाद एक मिलते हैं। जिनके हिस्से में पराक्रम है, शौर्य है, साहस है, हिम्मत है, वे दुनिया में अपने तरीके से काम करते हैं। कोलम्बस के तरीके से, नेपोलियन के तरीके से, सिकन्दर के तरीके से भौतिक दुनिया में बहुत काम कर जाते हैं और आध्यात्मिक जगत् में फरहाद से लेकर मीरा तक व विवेकानन्द से लेकर दयानन्द तक जाने क्या से क्या कर डालते हैं। वे गजब कर देने वाले प्राणी साहसी कहलाते हैं। साहसी को क्षत्रिय कहते हैं। तीसरे वर्ग के पास संपदाएँ रहती हैं और चौथे वर्ग श्रमिक जो अपने पसीने से, अपनी मेहनत-मशक्कत से दुनिया को खुशहाल बना देते हैं।**

आदिकाल में दुनिया कैसी रही होगी? आरम्भ में शायद वह ऊबड़-खाबड़ रही होगी, जैसी कि चन्द्रमा की खबर लेकर वैज्ञानिक आए हैं। एक इन्सान ही रहा होगा, जिसने अपनी मशक्कत से अपनी मेहनत से इस जमीन को समतल किया होगा। इसी तरह से जानवरों को जो उच्छृंखलों के तरीके से, अस्त-व्यस्तों के तरीके से हानि पहुँचाते हैं-प्यार से, सहकारिता से, डरा-धमका करके मनुष्य का सहयोगी बनाया होगा। उसकी मशक्कत ने ही दुनिया में तरह-तरह की नई चीजें लाकर खड़ी कर दीं। इमारतें बनाने से लेकर घर, कपड़ा बनाने से लेकर अन्न उपजाने तक यह आदमी का श्रम है। श्रम का अनुदान मिलने से आदमी निहाल हो गया।

ताकत दूसरे प्राणियों में भी है, पर वे श्रम नहीं कर सकते। नियोजित श्रम उनके पास नहीं है। हाथी के पास, घोड़े के पास ताकत है, पर वह उस ताकत का उपयोग नहीं कर पाता। पर इन्सान अपनी ताकत का जानकार है, उसका उपयोग कर सकता है और यह भगवान् का अनुदान है और इसी से वह साधन पाता है।

आदमी की बुद्धि का श्रेष्ठतम भाग-ऋत है। यह ऋत यदि आदमी को मिल जाए तो बुद्धि सार्थक हो जाती है, विद्या सार्थक हो जाती है, प्रज्ञा सार्थक हो जाती है और मनुष्य की जिन्दगी सार्थक हो जाती है। जिनमें से कुछ को भगवान् ने शिक्षा दी है, वे आप मेरे समक्ष बैठे हैं। अब कभी एक ही रह जाती है कि इस सीप में कहीं से स्वाति की बूँदें टपक जाएँ, जिनके पास दिमाग है, शिक्षा है, उनके अन्दर श्रद्धा की, स्वाति की बूँदें गिर जाएँ, तो आप ऋषि हो सकते हैं, महामानव हो सकते हैं। यह अकल का दुर्भाग्य है कि वह पेट भरने के काम आज आती है। उससे भी अधिक दुर्भाग्य आदमी का यह है कि यह अकल जाल बुनने के काम आती है, वाक्पटुता के काम आती है व दूसरों को धोखा देने का कुचक्र रचने के काम आती है। अकल से जो हम कमाते हैं तो क्या बताएँ आपको कि हम उसे कहाँ खर्च करते हैं? अकल की कीमत बाजार में ज्यादा मिलनी चाहिए। मिलती भी है, लेकिन उस मिलने के बाद हम करते क्या हैं? न जाने कहाँ से उसे खर्च कर देते हैं। ऐसे में ईश्वरचन्द्र विद्यासागर हमारे सामने आकर खड़े हो जाते हैं और बताते हैं कि अकल की कमाई कहाँ खर्च होनी चाहिए।

ईश्वरचन्द्र विद्यासागर को उन दिनों जो वेतन मिलता था, उन्होंने कहा-उसमें से हमें औसत नागरिक के गुजारे की हैसियत से पचास रुपये से अधिक नहीं चाहिए। उन्होंने अपने खानदान वालों को बुलाया और यह कहा कि हिंदुस्तान में जिस मुल्क में हम पैदा हुए हैं, उस स्तर के मुताबिक हमें अपने पर व कुटुम्ब पर इससे अधिक खर्च नहीं करना चाहिए। बाकी जो वेतन बचेगा, उसे हम अन्य कामों में खर्च करेंगे, जैसा कि भावनाशीलों, विचारशीलों को करना चाहिए। आपकी अकल भी उसी तरह खर्च होनी चाहिए जिस तरह से ईश्वरचन्द्र विद्यासागर की हुई। उनके दिल में दर्द था। उनके भीतर था-ऋत। ऋत उसे कहते हैं जिसमें शिक्षा की सार्थकता छिपी होती है। आप कौन हैं? आप वकील हैं तो अच्छा करते हैं क्या? सबेरे से शाम तक झूठ बोलते हैं व बुलवाते हैं। फरेब करते हैं व करवाते हैं। ऐसे पेट को फट जाना चाहिए। जो पेट आदमी की अकल की कमाई से देश के लिए, धर्म के लिए, इन्सानियत के लिए, भगवान् के लिए गुनाह कराता है, ऐसे पेट को आग लग जानी चाहिए।

मित्रो! यह ब्राह्मण के लिए लानत की बात है, शर्म की बात है। **भगवान् के दिए अनुदानों के सबको इस्तेमाल करना चाहिए। दूसरे लोग यदि अपनी अकल का इस्तेमाल न कर सकें, तो कम से कम ब्राह्मण को तो करना ही चाहिए। दिमाग अगर खराब हो जाएगा, अकल अगर खराब हो जाएगी तो शरीर का क्या होगा? जिस समाज में, जिस देश में, जिस युग में, दिमाग रूपी ब्राह्मण अस्त-व्यस्त हो जाता है, तब उस देश की मुसीबत आती है।** दूसरे लोग जब गड़बड़ा जाते हैं तो डाकू या उठाईगीर बन जाते हैं और क्या करेंगे? गुन्डे की सामथ्र्य बस सामान उठाने, मारपीट करने, हत्या करने तक की है, किन्तु जब ब्राह्मण बागी हो जाता है तो वह ब्रह्मराक्षस बन जाता है। अतः ब्रह्मराक्षस होने की लानत अपने सिर पर ओढ़ने से हमें इन्कार करना आना चाहिए और समय रहते चेत जाना चाहिए।

युग की पुकार है कि ब्राह्मण जगे। आप कौन है? हम तो कायस्थ हैं। भाई यहाँ वंश परम्परा का जिक्र नहीं हो रहा है। विचार परम्परा की दृष्टि से आप जहाँ बुद्धिजीवी हैं, वहाँ आप एक ऐसी परम्परा के अनुयायी भी हैं, जो आदमी को उसके कत्र्तव्यों, उत्तरदायित्वों की जानकारी कराती है। यदि ऐसा न होता तो आप हमसे क्यों जुड़ते? मैं सोचता हूँ कि आपके भीतर कहीं न कहीं ऋत है। ऋत जो भगवान् का सबसे बड़ा अनुदान है। हमारे व आपके लिए एक बहुत बड़ा काम करने

को पड़ा है। काम यह है कि जो कुछ भी विचार का क्षेत्र हमारे सामने फैला पड़ा है, इसके भीतर से इसके अध्यात्म को हम निचोड़ें। हमको साइंस की साइंस ढूँढ़नी है। वह मूल ढूँढ़ना है, जिन सिद्धान्तों को लेकर के आदमी ने साइंस बनाने व बढ़ाने के लिए कदम बढ़ाया। यह दोनों काम किए बिना इतने बड़े बुद्धि के जंजाल को काट सकना हमारे लिए सम्भव न हो सकेगा। बुद्धि का जंजाल, बुद्धि का भ्रम इतना बढ़ गया है कि क्या कहूँ मैं आपसे। बुद्धि के ऊपर से पड़े आवरण इतने ज्यादा कँटीले, इतने ज्यादा गहरे, इतने ज्यादा विषैले हैं कि इनकी काट-छाँट करने के लिए हमको बड़े आपरेशन की जरूरत पड़ेगी। कैंसर का आपरेशन करने के लिए मामूली चाकू काम नहीं आती। अन्दर लेसर किरणों से लेकर रेडियो आयसोटोप तक का इस्तेमाल करना पड़ता है और फूँक-फूँककर कदम रखना होता है। फिलॉसफी की फिलॉसफी, नीतिशास्त्र का नीतिशास्त्र, मनोविज्ञान का विज्ञान हम गढ़ना चाहते हैं, पर यह कठिन काम है। आपरेशन जितना कठिन।

अगला हमारा काम है-धर्मों का धर्म ढूँढ़ना। वह जो चार सौ करोड़ मनुष्यों में से अधिकांश के सिर पर हावी है। मैं सोचता हूँ कि तीन सौ करोड़ के ऊपर धर्म है। सौ करोड़ मनुष्य ऐसे हैं जो धर्म की लापरवाही करते हैं और बाद में परवाह नहीं करते। जो धर्म से नाखुशी जाहिर नहीं करते उनको मैं मानता हूँ कि उन्हें धर्म की अहमियत समझ में आ गई है। वे धर्म को समझते हैं। धर्म हेतु, विश्वधर्म की व्याख्या हेतु हमें आस्तिकता का, ईमान का प्रतिपादन करना होगा। धार्मिकता का, धर्मनिष्ठा, कत्तव्यपरायणता का प्रतिपादन करना होगा। इसके लिए बुद्धिवाद का सहारा लेना होगा। तर्क और दलीलों को हम रोक नहीं सकते। बुद्धिवाद को हम सीमित नहीं कर सकते। आदमी के भीतर से जब तर्क का माद्दा उत्पन्न होता है तो अंकुश लगाना कठिन हो जाता है।

तर्क-दलील आज के जमाने की सबसे अच्छी व सबसे वाहियात चीज है। अच्छी क्यों? क्योंकि उसमें सत्य को ढूँढ़ निकालने की सामथ्र्य है, सम्भावना है। वाहियात क्यों? क्योंकि दलील के पीछे अगर अंकुश न हो, नियन्त्रण न हो, तो वह सब कुछ कर सकती है। दलील आप किसी भी पक्ष में दे सकते हैं। संस्कृत की एक पुस्तक है जो एमए में पढ़ाई जाती है: न्यायकुसुमाञ्जलिष्। उसमें यह बताया गया है कि दलील कैसे दी जाती है, बहस कैसे की जाती है? बहस में यह भी किया जा सकता है और यह भी। उनके दो टॉपिक लिए हैं- एक ईश्वर है, दूसरा ईश्वर नहीं है। दोनों पक्षों में जोरदार बहस होती है। अन्त में दलील देने के बाद यह लिखा है कि हमने तो बहस करने का तरीका सिखाया है। आप यह विचार मत करना कि पुस्तक का लेखक नास्तिक है या आस्तिक।

दलील कुछ भी दी जा सकती है। उलटी भी हो सकती है, सीधी भी हो सकती है, निकम्मी से निकम्मी, बेहूदी से बेहूदी, पाजी से पाजी बातों के पक्ष में दलील पेश की जा सकती है। दलील ने ही स्वच्छन्द यौनाचार का पक्ष लिया है। दलील इतनी स्वेच्छाचारी है कि वह कभी फ्रायड का समर्थन करती है तो कभी अस्तित्ववाद के लिए कामूँका और नीत्से के तरीके से नास्तिकवाद का। यह अकल, यह दलील निरंकुश होने पर न जाने क्या कर सकती है। **मित्रो! हमें यदि चार सौ करोड़ व्यक्तियों का भाग्य बनाना है, नया युग गढ़ना है, तो हमें दलील की माँ को पकड़ना होगा। अकेले दलील से काम नहीं चलेगा। चोर की मौसी को गिरफ्तार करना होगा। अकल का, दिमाग का बहुरूपिया न जाने कैसे-कैसे वेश बदलकर हमें परेशान कर रहा है। हमें इस बहुरूपिये की जन्मदात्री को पकड़ना होगा तभी यह ठीक हो सकती है।**

शोध प्रसंग में दो बातों के बारे में हमें गंभीर होना पड़ेगा। आए दिन हमें जहाँ कहीं दो बोर्ड दिखाई देते हैं। एक बोर्ड है-'योग' एवं दूसरा है-'शोध-रिसर्च। योग सबसे बेहूदा मखौल है अध्यात्म का। गली-गली में योगा के नाम पर आश्रम खुले हुए हैं। इनसे पूछो कि योगा का क्या मतलब है तो दाँत निकाल देंगे। क्या योग मात्र सर्वांगासन होता है, डीप ब्रीदिंग होता है, हाथ-पैर चला लेना होता है, मेडीटेशन होता है? बन्दूक चलाने वाले, मैस्मेरिज्म करने वाले, चिड़िया मारने वालों में, सबमें मेडीटेशन होता है, यदि मेडीटेशन अकल इकट्ठी करने का नाम है। खबरदार! योगा अलग है और मेडीटेशन अलग है। योगा-योगा जहाँ देखो मखौल के लिए इन्हें और चीज नहीं मिली, जो योग को योगा बना दिया। दूसरे हर किसी को रिसर्च करते देख सकते हैं, शोध करते देख सकते हैं आप। गली-गली में रिसर्च करने वाले, गली-गली में शोधसंस्थान। शोध से कम में कोई बात ही नहीं करना चाहता। भाईसाहब, हमारे दिमाग में बड़ी चीज हैं। हम शोध का मजाक नहीं बनाना चाहते। बड़ी चीज के लिए बड़ा सामान इकट्ठा करने की कोशिश कर रहे हैं।

फिलहाल आपको एक छोटा-सा काम सुपुर्द करते हैं।

इन्टेलिजेंशिया जिस काम के लिए अभी बदनाम हैं, आप उस बदनामी को मिटाएँ। हर व्यक्ति जो इन्टेलिजेंशिया से जुड़ा है, कहता है हम तो व्यस्त हैं। कुल दो घन्टे स्कूल या कॉलेज में पढ़ाकर आते हैं वे कहते हैं कि हम बिजी हैं, गप्पें हाँकते रहते हैं व कहते हैं कि हम व्यस्त हैं। यह झूठी बहानेबाजी की बातें हैं।

आप यह देखें कि ऋत के धारणकत्र्ता होने के नाते प्रज्ञा के विस्तार की आप पर जो जिम्मेदारी है उसको निभाकर ही आप समाज के आप पर चढ़े ऋण को उतार सकते हैं। भगवान् का, विश्वमानव का आप पर ऋण है। इसके लिए पहली बात समय से चलती है। समय के साथ काम में तन्मय होने की कला। व्यस्तता इसे कहते हैं कि आदमी इस कदर लक्ष्य में तन्मय हो जाता है कि उसे समय का कोई ख्याल नहीं रहता। **आप युग अनुसन्धान, मानवधर्म की खोज, विज्ञान, अध्यात्म की शोध के विषय में गंभीर हैं तो आप बात वहाँ से शुरू कीजिए जहाँ से आपको टाइम देना पड़ेगा। यदि दे सकें तो समुद्र मन्थन कीजिए।** कभी देवता व असुरों ने मन्थन किया था। देवता कौन? विचारणा, श्रद्धा, सद्भावना, आदर्श तथा दैत्य कौन? दैत्य कहते हैं 'जाइंट' को शक्तियों को। दोनों ने परस्पर लड़ाई-झगड़ा करने की अपेक्षा समुद्र को मथना आरम्भ किया। भगवान् मदद के लिए आ गए व कच्छपावतार के रूप में मन्दराचल के नीचे उन्होंने स्वयं को लगा दिया। मथने के लिए शेषनाग आ गये व फिर विष निकला जिसे नीलकंठ प्रलयंकर महादेव ने धारण किया। तत्पश्चात् चैदह रत्न निकलते चले गये जिसमें लक्ष्मी व अमृत भी थे। जो काम हम और आप करने चले हैं, उसकी उपमा समुद्र मन्थन से दें तो कोई गजब की बात नहीं है।

समुद्र बहुत विशाल है। हमारा विचार परिकर बहुत विस्तृत है, समुद्र के तरीके से। यदि हम इसमें गोले लगा सकें तो बहुमूल्य मणि-माणिक्य इसमें से निकल सकेंगे। आप अपनी बुद्धि का सही उपयोग करके, समय देकर अपने सही अर्थों में बुद्धिजीवी होने का प्रमाण दीजिए। आप पर सारे समाज का, युग का एक ऋण चढ़ा है, महती दायित्व है। उसे निभाइए। बताइए विज्ञान का विज्ञान और अध्यात्म का अध्यात्म। तभी तो दोनों मिल सकेंगे। अगली पीढ़ी को महामानव बनाने के लिए इससे कम स्तर के पुरुषार्थ से काम नहीं चलने वाला। हम बड़ा काम ही सोचते हैं व करते हैं। क्या करना है हमें? हमें सूरज को, चन्द्रमा को धरती पर लाना है, जिससे इन्सान निहाल हो जाए। आपने वैभव-विलास की जेल में बहुत जीवन बिता लिया। आप समय दीजिए व अपनी अक्लमन्दी का सही प्रमाण देकर युगशोधन में खपिए, अपने को पूरी तरह लगा दीजिए। ज्ञान की जो धारा है, उसे अपने साथ ले जाइए और पूरे समाज में प्रवाहित कीजिए। आप सबको बस यही करना है।

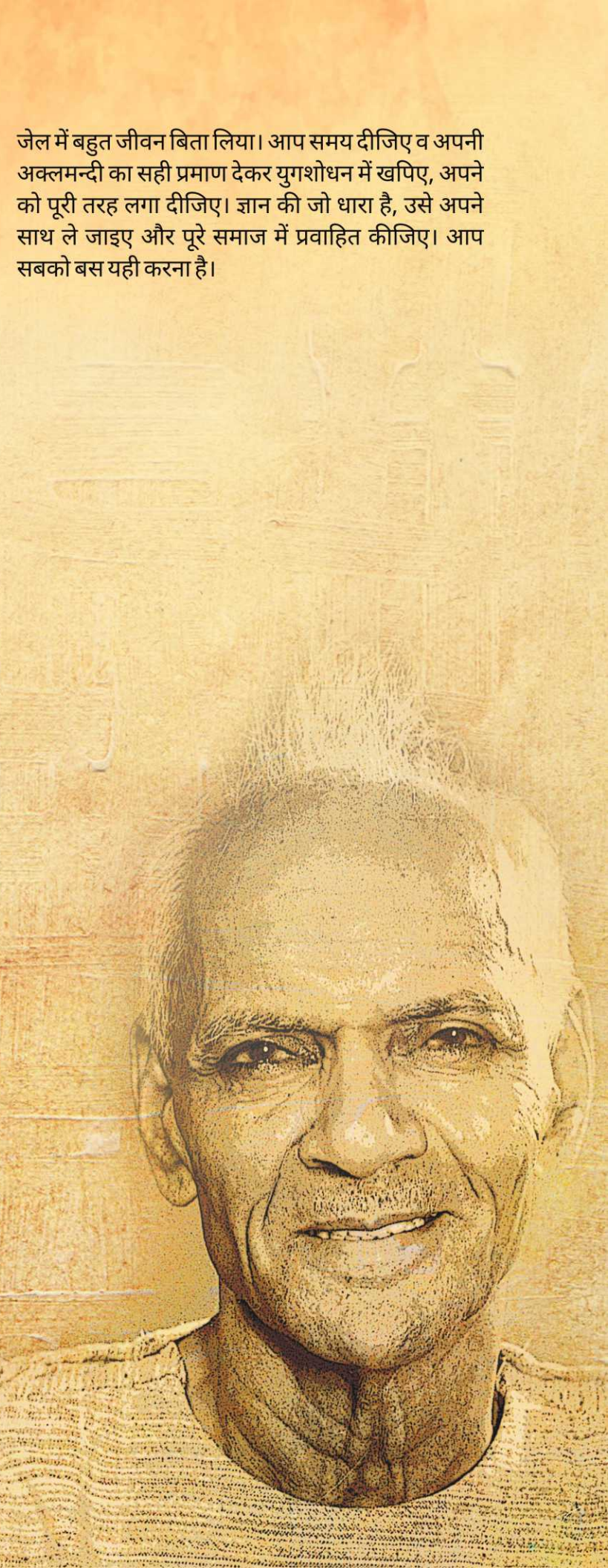

आस्था के जनसैलाब में - कुम्भ के तलाशते मायने

- देवसंस्कृति

"कुम्भ"- आन्तरिक और बाह्य ज्वार का पर्याय है। सरल शब्दों में यह एक ऐसी हुलसन है, जो अन्तरंग में भक्ति और आस्था की स्वस्फुरणा को जन्म देती है। कुम्भ - जिसमें विराट् जनमेदिनी अपने आप को ज्ञान, कर्म और भक्ति की त्रिवेणी में सराबोर करने को लालायित दिखती है। इस असंख्य भीड़ में श्रद्धा, निष्ठा और विश्वास स्वतः प्रयाग का रूप ले लेते हैं। पतित-पावनी, पुण्य-सलिला में सिर्फ एक डुबकी ही काफी है। इस हेतु बरसों से लोगों को इन्तेजार रहता है और घर के बड़े- बुजुर्गों के पास बैठें, तो वह कुम्भ के अनेकों खूबसूरत किस्सों की फेहरिस्त लिए दिखते हैं। आखिर इस कुम्भ में लोग क्या लेने आते हैं? यहाँ कुछ पाया भी जाता है या फिर यह महज एक कौतूहल है, तमाशा है या फिर सिर्फ एक मेला, जिसमें आकर्षण की खोज में लोग आते हैं। लाखों की इस भीड़ में, कुम्भ के हज़ारों मायने समझ में आते हैं। किसी को सन्त की तलाश है तो किसी को शाँति की, कोई उत्सुकता में चला आ रहा है, तो कोई अपनी किस्मत आजमाने। किसी ने सिर्फ कुम्भ के बारे में सुना है, तो कोई अपनी जिज्ञासाओं की शांति के लिए चला आ रहा है। कोई नागाओं को देखने आ रहा है, तो कोई कथा, कहानी और महात्माओं के विचारों को आत्मसात् के उद्देश्य से प्रस्तुत हैं। कोई हृदय में शिव की आस लेकर चला है तो कोई शव में शक्ति के दर्शन को लालायित हैं। असंख्य आँखों, जिज्ञासाओं, समस्याओं, सम्भावनाओं और सत्कर्मों का साक्षी बनता है - यह कुम्भ। **"जाकी रही भावना जैसी प्रभु मूरत देखी तिन तैसी" की विलक्षण अभिव्यक्ति- कुम्भ ही तो है।**

प्रश्न यही कि इस कुम्भ के जनसैलाब में कब, कहाँ और क्या पाया जा सकता है? यक्ष सामान यह प्रश्न, कठिन भी है और सरल भी। कठिन इसलिए की इंसानी सोच, समझ और क्रियाशीलता भिन्न-भिन्न है। ऐसे में किसी वस्तु, व्यक्ति और मंतव्य को पाना आसान नहीं होगा और सरल इसलिए की इंसानी सामर्थ्य अपरिमित है। इंसान अपने तप, जप और अनुष्ठान से कुछ भी, कहीं भी, करने की सामर्थ्य रखता है। यह विशाल जनमेदिनी तो माँ गँगा की अविरल बहती धारा सी प्रतीत होती है। इसमें स्निग्धता, चमक और हतप्रभ करने की शक्ति भी है और आचमन और स्नान कर के अमृत पान की सामर्थ्य भी। सत्य यही कि इसे अगर भक्तिभाव से देखें तो इस भीड़ में देवता, यक्ष, किन्नर, असुर, देवशक्तियाँ सभी तो समाहित हैं और साथ ही साथ, सूक्ष्म चेतना के संवाहकों का मूर्त रूप भी इसमें सहज प्रतीत होता है। यहाँ दर्शन तो सभी के होते है पर दृष्टिभेद हो जाता है। चर्मचक्षुओं के आगे भी संसार है, यह बात इस कुम्भ में सत्य और स्पष्ट होती है।

हम कुम्भ में क्या खोजने या पाने आये हैं, यहीं से कहीं, सभी की नियति और नीयत में अन्तर आ जाता है। साधारण

इंसान ईश्वर, जगत्, माया और ब्रह्म के विराट् कलेवर से अपरिचित है। वह तो सिर्फ माँ गंगा के दर्शन को ही आता है। एक डुबकी अपनी और कुछ डुबकियाँ अपने परिवार के बड़े, बुजुर्गों, पितरों और कुलदेवताओं की लगाकर वह धन्य हो जाता है। साथ ही वह अपने साथ गंगा जल को ले जाना नहीं भूलता, क्योंकि उसे सिर्फ इतना ही पता है कि इसके पहले की कोई आपको कंडियाँ या मटके में लेकर लाये, एक बार माँ गंगा के दर्शन, आचमन और स्नान जीते जी कर लें। उसके लिए माँ गंगा में डुबकी लगा लेना ही स्वर्ग है। सन्तों, महात्माओं के दर्शन कर लेना ही मोक्ष है और वह सच मायने में इतने से ही खुश और सन्तुष्ट है। उसके लिए इतना ही कुम्भ और उसका संसार है और उसको पाकर वह निहाल हो जाता है।

भक्त का यही स्वरूप आम प्रचलन में है। वैसे तो भक्त और भगवान् का अनूठा रिश्ता होता है और गीताकार के शब्दों में चार तरह के भक्तों का वर्णन आता है।

चतुर्विधा भजन्ते मां जना: सुकृतिनोऽर्जुन।
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ।
(श्रीमद्भगवद्गीता ७/१६)

सरल शब्दों में, भगवान् स्वयं अपने भक्तों के बारे में बताते हुए कहते हैं कि अर्थार्थी, आर्त, जिज्ञासु और ज्ञानी इन चार प्रकार के भक्तों के अपने गुण, कर्म और व्यवहार होते हैं। साधारण इन्सान को अर्थार्थी मान सकते हैं, इसमें कुछ प्राप्त करने की इच्छा भी समाहित होती है। किसी दैवीय चमत्कार की आशा और अपेक्षा से धन, वैभव और समृद्धि के मनोभाव को समेटे- अर्थार्थी कुम्भ में आते हैं। इसके बाद आर्तभाव के मनुष्य आते हैं जो किसी विपदा, प्रतिकूलता या विकटता के समाधान की चाहत से कुम्भ में प्रवेश करते हैं। सामयिक परिस्थितियों से परेशान, दु:ख के मनोभावों को दूर करने की आशा से भी भक्तों का कुम्भ में आगमन होता है। ऐसे साधकों, गृहस्थों में मनोकामना पूर्ति का भाव प्रबल होता है। हाँ ! ईश्वरीय चेतना पर परम विश्वास ही, उनका सम्बल होता है और द्रौपदी, गजराज, उत्तरा इसके प्रबल उद्धरण हैं। आर्तभाव के भक्तों को कुम्भ में कुछ प्राप्त अवश्य होता है। ईश्वर पर अटूट आस्था ही उनकी वैतरणी को पार लगाती है।

इसके आगे जिज्ञासुओं का क्रम आता है। ईश्वर क्या है, मैं क्या हूँ, जीव, जगत्, ब्रह्म और माया क्या हैं, ऐसे अनेक प्रश्नों को लेकर जिज्ञासु भी कुम्भ में प्रस्तुत होते हैं। इनमें साधक, नावगन्तुक सन्त, गृहस्थ, ब्रह्मचारी और वानप्रस्थियों - परिव्राजकों की गिनती आती है। आस्था - अनास्था के समुन्दर में गोते खाते हुए, अपनी सोच और समझ को निरन्तर धार देते हुए, ज्ञान- भक्ति और कर्म की धाराओं में बहते हुए, वह माँ गंगा के तट पर समाधान की आशा और अपेक्षा से प्रस्तुत होते हैं। **जिज्ञासा ही तो मुक्ति का पहला**

द्वार है और इसी मुक्ति द्वार की सीढ़ी - हरिद्वार है। जिज्ञासुओं, ज्ञान-पिपासुओं की दृष्टि – हर शक्ति में शिव दर्शन की है। हर तत्व में ब्रह्म को पाने की ललक है और कंकर में शंकर को खोज निकालने की अहर्निश चेष्टा ही उन्हें जिज्ञासु बनाती है।

कबीर कहते हैं **"जिन खोजा तिन पाइयाँ, गहरे पानी पैठ, मैं बपुरा बूडन डरा, रहा किनारे बैठ"।** अगर खुद को जानना और समझना है तो कुछ पुरुषार्थ करना ही पड़ेगा। पूज्य आचार्यश्री के शब्दों में "असफलता केवल यह सिद्ध करती है कि सफलता का प्रयास पूरे मनोयोग से नहीं किया गया"। जिज्ञासुओं की सामर्थ्य और अभीप्सा के आधार पर ही, उन्हें सार्थक शक्ति और भक्ति प्राप्त होती है। उनकी उत्कण्ठा ही उन्हें विशिष्ट योग, गुरु और ऋषिसत्ताओं से मिलवाती है। कुम्भ तो योग का पर्याय है। कुम्भ में कहीं आस्था से अभिपूरित योग है, तो कहीं भक्ति के दर्शन में समाहित योग। कहीं विवेक से प्रकाशित योग है, तो कहीं अतीन्द्रिय क्षमताओं से पल्लवित योग। ऐसा लगता है कि कुम्भ में हर कोई, अपने-अपने योग में प्रयोग कर रहा हो। कोई योगी बन रहा है, तो कोई उपयोगी होने की अलख जगाये हुए है। किसी को वियोग भाता है तो कोई सहयोग में हरि-दर्शन कर आता है।

और फिर अन्तिम प्रकार के भक्त ज्ञानी होते हैं। गोस्वामी जी के अनुसार –**"काहु न कोउ सुख दुख कर दाता। निज कृत कर्म भोग सबु भ्राता"** के तत्त्वज्ञान को जीवन में सहज उतारने वाले, ज्ञानीजन भी इस कुम्भ में आते हैं। निर्लिप्त, निर्विकार, वीतरागी और जीवन के असंख्य - अनन्त प्रश्नों के तात्विक उत्तरों को खुद में समेटे हुए, ऐसे विशिष्ट साधकों को पाकर कुम्भ भी निहाल हो जाता है। सब कुछ उसी परमात्मा का, हर आत्मा में उसके ही अंश को देखने वाले ऐसे सन्तों, अतिविशिष्ट गुणीजनों का दर्शन मिलना सौभाग्य का विषय रहता है। कहते हैं कि ऐसे विशिष्ट सन्त, अशरीर-धारी आत्माएँ भी कुम्भ में समाहित होती हैं। ऐसे विशिष्ट ज्ञानी, मनीषी और श्रेष्ठ साधक ही, देवमानवों के स्वरूप को सुशोभित करते हैं।

यह ज्ञानीजन ज्ञान को भार या प्रदर्शन की वस्तु ना मानते हुए अपनी सहजता, सरलता और सदाशयता की अमिट छाप, हर मिलने वाले के हृदय पर अंकित कर जाते हैं। उनके लिए तो हर घडी, हर निमिष, आठों प्रहर, साल के बारह महीनों - कुम्भ है। यह अन्तर्जगत् के साधक होते हैं और अपने अन्तरंग की इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना की त्रिवेणी में नियमित डुबकी लगाते रहते हैं। अपने षट्चक्रों का भेदन करके, सहस्रार में नियमित अमृत वर्षा के योग से, अपने जीवन को शाश्वत जाज्ज्वलयमान बनाये रखते हैं। अपने पञ्चकोशों के जागरण से यह साधक आधि और व्याधि से परे चले जाते हैं। सन्तों के नवनीत हृदय की प्राप्ति करके, यह ज्ञानीजन लोकहित, परमार्थ-परायणता और चालयमान जागृत तीर्थ बन जाते हैं और उनका सान्निध्य और सहचर, जीवन में नूतन उत्साह और स्फूर्ति प्रदान करता है। आनन्द स्वामी जी, पूज्य आचार्यश्री, पायलट बाबा, तैलंग स्वामी महाराज, गुरु मत्स्येन्द्र नाथ को आप इसी क्रम में देख, जान और मान सकते हैं।

प्रश्न वही कि इस बार हम कुम्भ में किस मनोयोग से जायेंगे? क्या कुछ पाने की लालसा से या कुछ खोजने की उत्कण्ठा से कुम्भ प्रवेश होगा? क्यों न पाने और चाहने की छोटी सोच को छोड़कर, इस बार ज्ञानवान् बनने की ओर कदम बढ़ाया जाये? आस्था की डुबकी तो सभी लगाते हैं, क्या बेहतर हो सगरपुत्रों के दुःख हरने के लिए, भगीरथ बनने की सोच उभरे? अपने और अपनों के लिए तो सभी माँ गंगा से माँगते हैं, क्या बेहतर हो **"सर्वे भवन्तु सुखिनाः"** की सोच को आत्मसात् किया जाये? इस कुम्भ में शरीर को धोने के साथ-साथ मन और आत्मा के अभिसिंचन पर ध्यान दिया जाये। वैसे तो नैसर्गिक है - इस देह का विकास और विराम, क्या यह उचित नहीं कि अपनी आत्मा को निखारा जाये? उसमें सुसंस्कारिता की अमृत बूँदों से अभिषेक किया जाये। आत्मा के कलेवर को, देवत्व के गुणों से अभिपूरित पुष्पों की माला चढ़ाई जाये। उस निखरती आत्मा पर प्रेम, स्नेह और आत्मीयता के चन्दन का लेप किया जाये। अपनी श्रद्धा और निष्ठा को सुगन्ध बनाकर, निज आत्मा को सुरभित करना श्रेयस्कर रहेगा।

आइये इस कुम्भ को महज शब्द नहीं बनायें, वरन् इसे जीवन में आत्मसात् भी किया जाये। यह कुम्भ तो आन्तरिक भी है और बाह्य भी। हमने इतने दिनों बाह्य कुम्भ को जाना, परखा और समझा है। क्यों न एक बार आन्तरिक कुम्भ की बानगी भी देख आते हैं। ईश्वरीय चेतना तो हमारी मार्गदर्शक बनने को तत्पर है, बस हमें ही कदम बढ़ाना है, तो फिर देर कैसी? आइये मिलकर कदम बढ़ाते हैं।

संगीत और मनोविज्ञान - एक संक्षिप्त अवलोकन

- डॉ. शिवनारायण प्रसाद, विभागाध्यक्ष, भारतीय शास्त्रीय संगीत विभाग

संगीत सर्वश्रेष्ठ ललित कला है और उसके मूल सिद्धान्त, मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि के आधार पर प्रत्येक व्यक्ति के लिए अलग- अलग हो सकते हैं, परन्तु उसका मापदण्ड एक हद तक सामान रहता है। संगीत एवं मनोविज्ञान का गहरा सम्बन्ध है। **"मन का विज्ञान"** अर्थात कल्पना, ध्यान, स्मृति, रुचि आदि तत्वों के आधार पर कलाकार सीखने एवं बंदिश रचना से लेकर अपने संगीत की अभिनव प्रस्तुति की यात्रा तय करता है।

वैसे तो बोध और संवेदना द्वारा हम जो कुछ भी अनुभव करते हैं, वह मनोविज्ञान की परिधि में आता है। संगीत से मन भी एकाग्र होता है और कुछ देर के लिए संगीत की स्वर लहरियों में डूबकर, मन अपनी सभी चिन्ताओं, परेशानियों से मुक्त हो जाता है। मन के लिए संगीत लहरियाँ एक कैटेलिस्ट का काम करती हैं और मन को दुःख- दर्द भुलाने में सहायक भी सिद्ध होती हैं। संगीत मन को मनाने का, समझाने का विशिष्ट उपक्रम है।

अवचेतन में पड़ी हुयी इच्छाएँ और संवेग कला के द्वारा उत्तेजित होते हुए, श्रोता एवं दर्शक तक पहुँचकर उन्हें सम्मोहित करते हैं। संगीत में यह प्रक्रिया सबसे तीव्र होती है। संगीत का साधक भी मनोविज्ञान के इसी प्रभाव से सम्मोहित होकर अपनी समस्त आकांक्षाएँ, अपेक्षाएँ और भावनाएँ, अपने संगीत से जोड़ता है एवं जनमानस को समर्पित करता है। संगीत मानव जीवन का सबसे निकटम साथी है।

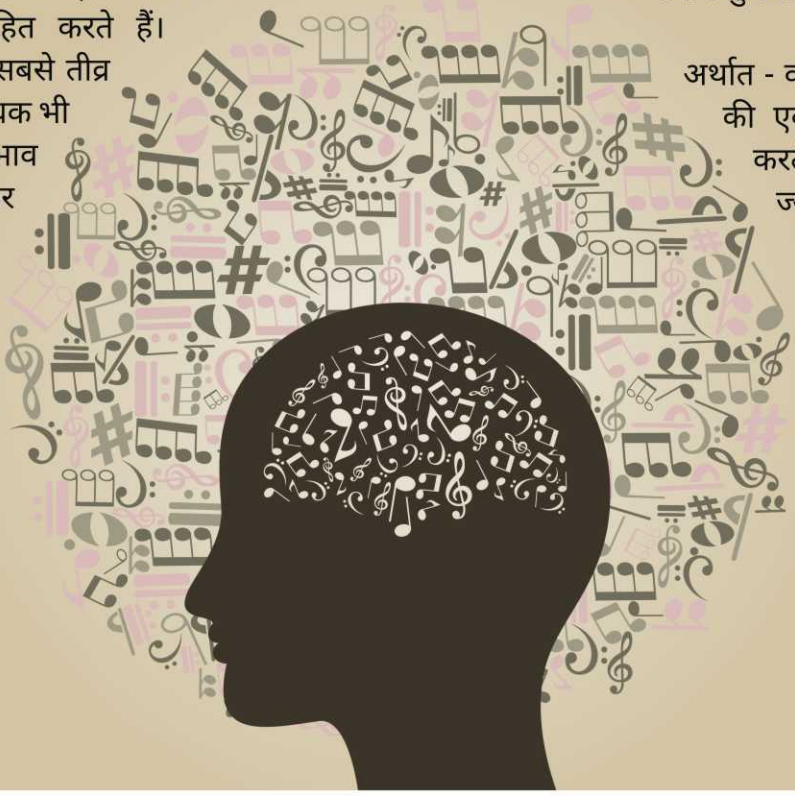

मनुष्य के बाल्यकाल की स्मृतियाँ जैसे लोरी, गीत, पूजा या कोई भी लयात्मक ध्वनियाँ धुँधले रूप में स्मरण में रहती है और यही स्मृतियाँ उसे अनजाने में संगीत साधना से जोड़ती जाती हैं। आगे यही स्मृतियाँ उसके व्यक्तित्व के विकास में भी सहायक होती जाती हैं। संगीत का शरीर के बाह्य एवं भीतरी अंगों से सीधा सम्बन्ध है। कण्ठ संगीत में स्वरोच्चार के लिए शरीर के भीतरी प्राणवायु की आवश्यकता होती है। इस कार्य के लिए "मानस" (मस्तिष्क) सबसे क्रियाशील होता है। उपनिषद् कहते हैं -

ब्रह्मप्रणव सन्धानं नादो जातिर्भयः शिवः।
स्वयमाविर्भ वेदात्मा मेघपायेंऽशुमानिव।।
सिद्धासने स्थितो योगी मुद्रां संधाय वैष्णवी
शृणुयामदक्षिणे कर्णे नादमन्तर्गतं
अभ्यस्यमानो नादोऽयं बाह्यमावृणुते ध्वनिं
पक्षादिपक्षखिलं जित्वा तुर्यपदं व्रजेत ।

- नादबिन्दु उपनिषद् 30/ -32

अर्थात - वत्स ! आत्मा और ब्रह्म की एकता का जब चिन्तन करते हैं, तब कल्याणकारी ज्योति स्वरूप परमात्मा

का नाद रूप में साक्षात्कार होता है। (यह संगीत ध्वनि बहुत ही मधुर होती है।) योगी को सिद्धासन से बैठकर, वैष्णवी मुद्राधारण कर, अनाहत ध्वनि को सुनना चाहिए। इस अभ्यास से बाहरी कोलाहल शून्य होकर अन्तरंग तुर्य पद प्राप्त होता है।

संगीत का उद्गमस्थल मन ही तो है। इसीलिए संगीत और मन का परस्पर सम्बन्ध और सहचर्य है। मनोविज्ञान मानव की मानसिक स्थिति का अध्ययन करता है और संगीत मानव मन की भावनाओं को अभिव्यक्त करता है। मानव अपने जीवन को सफल बनाने हेतु किस प्रकार भावनाओं पर अंकुश रखकर व्यावहारिक जीवन को सफल बना सकता है यह मनोविज्ञान का विषयक्षेत्र है। संगीत अपने सांगीतिक गुण - आनन्द, एकाग्रता, आत्मशक्ति आदि के कारण मानव को तनाव मुक्त कर सन्तुलित व्यवहार की ओर प्रेरित करता है। संगीत ही नहीं समस्त ललित कलाएँ ही स्वस्थ मन की सर्वोच्च चेष्टाओं का प्रतिरूप है। भावाभिव्यक्ति का परिष्कृत रुप कला है और विकृत रूप मानसिक रोग।

संगीत सिर्फ शब्द गुन्थन नहीं वरन् इसके साथ भाव, कल्पना, संवेग और अनुभूति का परस्पर जुड़ाव है और जहाँ भी भाव, संवेग और कल्पना का प्रादुर्भाव होगा, वहाँ पर मनोविज्ञान स्वतः उपस्थित हो जाता है। सरल शब्दों में संगीत प्राणों को विस्तारित कर, मन की हलचलों पर विराम लगता है। जहाँ साधक ने संगीत राग छेड़ा, वहीं श्रोता उस संगीत से बँधता चला जाता है। इसीलिए तो संगीत एक वैश्विक समष्टिगत भाषा है - जहाँ शब्दों की, उसके अर्थों की अतिशय आवश्यकता नहीं है। संगीत सुनकर मन हिलोरे लेने लगता है।

संगीत का असर शरीर को एकाग्र करने, मन को विश्राम देना, आत्मा में नवस्फूर्ति भरने के लिए, आज वैज्ञानिक भी उपयोग कर रहे हैं। नैदानिक मनोविज्ञान के बड़े कलेवर में संगीत चिकित्सा भी अपनी पैठ बनाती जा रही है। कई ऐसे मनोवैज्ञानिक उपक्रम हैं जहाँ संगीत के द्वारा इन्सान के चेतन और अचेतन दोनों को ठीक किया जा रहा है।

आज कोरोना काल में संगीत जैसी विलक्षण साधना और उपक्रम का महत्व और बढ़ जाता है। हाहाकार करती मानवता के सामूहिक मन को सिर्फ और सिर्फ संगीत ही सँभाल सकता है। मानसिक विकृति, अपनों को खोने का दर्द, मृत्यु का भय और अनगिनित विसंगतियों पर संगीत ही पूर्ण विराम लगा सकता है। जरूरत है युगानुकूल संगीत को प्रस्तुत करने की, जो मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार को शान्त कर सके। मन की विसंगतियों को रोककर प्रेम, स्नेह और अपनत्व के फूल खिला सके। युग निर्माण के प्रणेता पण्डित श्रीराम शर्मा आचार्य जी ने ऐसी परिष्कृत संगीत कला के प्रचार प्रसार के लिए विशेष बल दिया है।

हठयोग - एक प्रकृति आधारित स्वास्थ्य प्रणाली

- डॉ. असीम कुलश्रेष्ठ (सहायक प्राध्यापक, योग विभाग)

हठयोग अर्थात् हठपूर्वक अपने शरीर एवं मन को सकारात्मक दिशा में मोड़ना योग के अन्तर्गत हठयोग के इस भाग में यह हठ तनावपूर्वक नहीं किया जाता ; बल्कि यह अपने जीवन में रचनात्मक परिवर्तन लाने हेतु किया जाता है। हठयोग से सम्बन्धित मुख्य ग्रन्थों में घेरण्ड संहिता एवं हठयोग प्रदीपिका मुख्य है। इन ग्रन्थों के अन्तर्गत प्रकृति आधारित स्वास्थ्य को भली-भाँति समझा जा सकता है।

षटकर्म एवं स्वास्थ्य -

षट्कर्म दो मुख्य प्राण प्रवाहों इड़ा एवं पिंगला के मध्य सामञ्जस्य स्थापित करते हैं, जिससे शारीरिक एवं मानसिक शुद्धि और सन्तुलन की प्राप्ति होती है। ये शरीर में उत्पन्न त्रिदोषों वात, पित्त और कफ को भी सन्तुलित करते हैं। इन षट्कर्मों का उपयोग अमूमन व्यक्ति अपने स्वास्थ्य को बनाये रखने व अशुद्धि निवारण के लिए करता है। इस क्रिया से व्यक्ति का शरीर विकार रहित हो जाता है। इस अभ्यास को गुरु या विशिष्ट चिकित्सक के निर्देशन में ही करना चाहिए।

धैतिर्वस्तिस्तथा नेतिः लौलिकी त्राटकं तथा।
कपालभतिश्चैतानि षट्कर्माणि समाचरेत्।।

धौति वस्ति नेति लौलिकी त्राटक और कपालभाति इन छः कर्मों का आचरण योगी के लिए आवश्यक है। इस मंत्र में यह घोषणा की गयी है। इन षट्कर्मों द्वारा शरीर की शुद्धि होती है, इसका प्रयोजन केवल शरीर की शुद्धि ही नहीं ; वरन आत्मशुद्धि भी है ; क्योंकि शरीर की शुद्धि के साथ-साथ जब हमारे भीतर से विकार दूर होने लगते हैं, तब स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है। शुद्धि के बिना शरीर योग के उच्च आयामों के लिए तैयार भी नहीं हो पायेगा। शुद्धि के पश्चात् मनुष्य इस पृथ्वी पर दीर्घायु हो जाता है। विकार तथा अशुद्धियाँ अस्वस्थता ही सबसे बड़ी बीमारी है और अस्वस्थता का मूल कारण है - शरीर में विकारों का उत्पन्न होना, शरीर का अशुद्ध होना। ये अशुद्धियाँ शरीर में किसी भी समय, किसी भी अवस्था में उत्पन्न हो सकती हैं। यहाँ अशुद्धि का तात्पर्य गन्दगी से नहीं है। यह अशुद्धियाँ शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक हैं। इन क्रियाओं को विस्तार से समझने का प्रयास करते हैं।

धौति क्रिया- यह पहली क्रिया है। धौति में आमाशय और अन्न नलिका की सफाई होती है। यह सफाई पानी से भी कर सकते हैं कपड़े से भी कर सकते हैं और वायु से भी कर सकते हैं, इसकी तीन विधियाँ हैं। इस अभ्यास से आमाशय के दोष दूर हो जाते हैं। अपच की बीमारी तथा पेट से सम्बन्धित अन्य बीमारियाँ जैसे कब्ज, अम्लता इत्यादि धौति की क्रिया से ठीक हो जाती हैं।

बस्तिक्रिया- दूसरी है बस्तिक्रिया। यह एक यौगिक एनिमा है, गुदा द्वार से जल खींचना- कुछ समय तक उसे अपने शरीर के भीतर अर्थात् बड़ी आँत में रखना। छोटी आँत में तो कभी पानी जायेगा नहीं, केवल बड़ी आँत में पानी रुकता है। उसके बाद उस जल का निष्कासन कर देना है। ठीक वैसे ही, जैसे एनिमा में होता है। केवल इतना अन्तर है कि एनिमा में यही क्रिया यन्त्र के सहारे होती है - एक ट्यूब के माध्यम से। पर बस्तिक्रिया स्वाभाविक रूप से होती है।

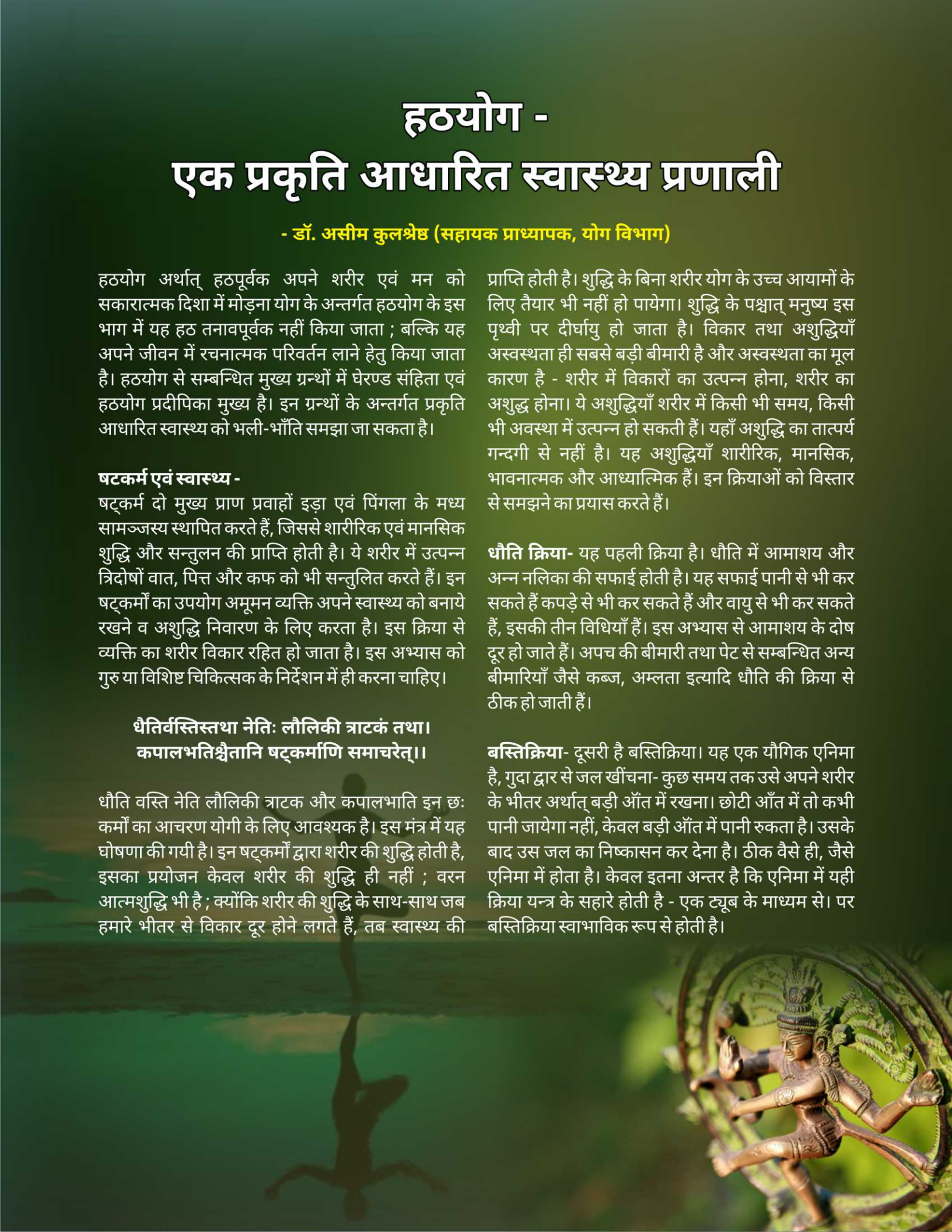

नेति क्रिया- तीसरी क्रिया है नेति। यह नाक कान एवं गले की सफाई करती है। यह एक बहुत ही सरल क्रिया है। एक नासिकारन्ध्र से पानी डालना और दूसरी नासिकारन्ध्र से निकाल देना। जिन लोगों ने नेति का अभ्यास किया है वह इसका लाभ जानते हैं। यह नासिका के अन्दर सायनस को साफ कर देता है। जिन लोगों को साइनोसाइटिस, रानाइटिस, सरदर्द या माइग्रेन है या अग्र ललाट में जो हमेशा दर्द होता रहता है या जिन लोगों की दृष्टि कमजोर है, ऑखें जल्दी थक जाती हैं, कुछ देर पढ़ने के बाद ऑखों में पानी आ जाता है, आँखें लाल हो जाती हैं, दर्द देती हैं या कान से सम्बन्धित जो थोड़ी बहुत समस्याएं होती हैं। ऐसी सभी बीमारियों के लिए नेति क्रिया बहुत उपयुक्त है।

नौलि क्रिया: चौथा अभ्यास है नौलि, जिसे लौलिकी भी कहते हैं। यह उदरस्थ अंगों की मालिश तथा उन्हें बल प्रदान करने वाली शक्तिशाली विधि है। लौलिकी का अभ्यास बहुत ही उपयोगी है। अपचन, भूख की न्यूनता, भूख कम लगना या पेट में कीड़े होने पर इसका अभ्यास करना चाहिए। वायुदोष को दूर करने के लिए भी यह बहुत ही उपयोगी अभ्यास है।

त्राटक- पॉंचवॉं अभ्यास है त्राटक। ऑखों और तन्त्रिका-तन्त्र के आँगीय एवं कार्यात्मक विकारों को दूर करने के लिए यह अभ्यास बहुत ही उपयोगी है। यदि किसी अंग में, ऑखों में या तन्त्रिका तन्त्र में, कुछ विकार उत्पन्न हो जाते हैं, जैसे कभी-कभी एक ऑख की पलक हमेशा जल्दी-जल्दी झपकती रहती है, इत्यादि के लिए त्राटक बहुत उपयोगी है। त्राटक के अभ्यास से निकट दृष्टि दोष दूर दृष्टि दोष, मायोपिया या ऑखों से सम्बन्धित अन्य दोष- स्वस्थ शरीर में बहुत हद तक नियन्त्रित रखे जा सकते हैं।

कपालभाति- छठा अभ्यास है कपालभाति, यह फेफड़ों का अभ्यास है। इससे फेफड़ों से सम्बन्धित दोष दूर होते हैं। इससे वायु नली तो विकार रहित बनती ही है, रक्त भी शुद्ध होता है ; क्योंकि हम अधिक मात्रा में ऑक्सीजन भीतर ले जाते हैं। स्नायविक अव्यवस्था और मस्तिष्क रोग में भी कपालभाति लाभदायक है। जिन लोगों की याददाश्त कम हो जाती है, उनके लिए भी यह बहुत उपयोगी है।

आसन प्राणायाम बन्ध एवं स्वास्थ्य से उपचार हठयोग की विधियॉं जीवन के प्राण-प्रवाह को सम्वर्धित नियंत्रित व नियोजित करती हैं। चिकित्सा के सभी विशेषज् इस बारे में एक मत हैं कि प्राण-प्रवाह में व्यतिक्रम या व्यतिरेक आने से, देह रोगी होती है और मन अशान्त। इस सन्तुलन के कारण शरीरिक हो सकते हैं और मानसिक भी, पर इन दोनों का परिणाम एक ही होता है। यदि यह सम्बन्ध पुनः सँवर सके और देह में प्राण फिर से सुचारु रूप से संचालित हो सके, तो सभी रोगों को भगाकर स्वास्थ्य लाभ किया जा सकता है।

इन प्रक्रियाओं का सारा जोर प्राणों के संवर्धन, परिशोधन एवं विकास पर है। हमारे जीवन में प्राण-प्रवाह का स्थूल रूप - श्वास है। श्वास के आवागमन से देह में प्राण प्रवेश करते हैं और अंग-प्रत्यंग में विचरण करते हैं। आसन, प्रणायाम, बन्ध एवं मुद्रा आदि प्रक्रियाओं के द्वारा, इन पर नियन्त्रण स्थापित करके, इनके प्रवाह को अपनी ऐच्छिक दिशा में मोड़ा जा सकता है। ये प्रभाव हठयोग की विधियों के हैं, जिनमें सबसे प्रारम्भिक विधि आसन है। शरीर के विभिन्न अंगों को मोड़-मरोड़ कर किए जाने वाले ये आसन अनेक हैं और प्रत्यक्ष में ये किसी व्यायाम जैसे लगते हैं किन्तु यथार्थता इससे भिन्न है। व्यायाम की प्रक्रियाएँ कोई भी हो, कैसी भी हो- इनका प्रभाव केवल शरीर के प्रत्येक अवयव में प्राण को क्रियाशील करके, उसे सम्पूर्ण स्वास्थ्य प्रदान करता है। प्रभाव की दृष्टि से सोचें तो इनके प्रभाव शारीरिक होने के साथ- साथ मानसिक व आध्यात्मिक भी हैं।

शारीरिक दृष्टि से देखें तो आसनों से शरीर की सबसे महत्त्पूर्ण अन्तः स्त्रावी ग्रन्थि प्रणाली नियन्त्रित एवं सुव्यवस्थित होती है। परिणामतः सभी ग्रन्थियों से उचित मात्रा में रस का स्त्राव स्त्राव होने लगता है। ध्यान देने की बात यह भी है कि मांसपेशियाँ, हड्डियॉं, स्नायु मण्डल, ग्रन्थिप्रणाली, श्वसन प्रणाली, उत्सर्जन प्रणाली, रक्त सञ्चरण प्रणाली- सभी एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। एक दूसरे की सहयोगी हैं। आसन के अनेक प्रकार शरीर को लचीला तथा परिवर्तित वातावरण के अनुकूल बनाते हैं। इनके प्रभाव से पाचन क्रिया तीव्र हो जाती है। उचित मात्रा में पाचक रस तैयार होता है। अनुकम्पी एवं परानुकम्पी तंत्रिका प्रणाली में सन्तुलन आ जाता है। फलस्वरूप इनके द्वारा बाहरी और आन्तरिक अंगों के कार्य ठीक ढंग से होने लगते हैं।

शरीर के साथ आसनों की क्रियाएँ, मन को भी समर्थ व शक्तिशाली बनाती हैं। इनके प्रभाव से दृढ़ता व एकाग्रता विकसित होती है। यहाँ तक कि कठिनाइयॉं मानसिक शक्तियों के विकास का माध्यम बन जाती हैं। व्यक्ति में

आत्मविश्वास आता है और वह औरों के लिए प्रेरणाप्रद बन जाता है। आध्यात्मिक दृष्टि से देखें, तो आसनों के प्रभाव से शरीर शुद्ध होकर उच्चस्तरीय आध्यात्मिक साधनाओं के लिए तैयार हो जाता है।

प्राणायाम आसनों की अपेक्षा अधिक सूक्ष्म विधि है। इसकी सारी प्रक्रियाएँ श्वसन के आरोह-अवरोह एवं उसके स्वैच्छिक नियंत्रण पर टिकी हैं। यथार्थ में, यह विश्व-व्यापी प्राण-ऊर्जा से अपना सामञ्जस्य स्थापित करने की विधि है। आम तौर पर लोग इसे केवल अधिक ऑक्सीजन प्राप्त करने की प्रणाली के रूप में जानते हैं; किन्तु सत्य इससे भिन्न है। श्वसन के माध्यम से इसके द्वारा नाड़ियों, प्राण नलिकाओं एवं प्राण के प्रवाह पर व्यापक असर होता है। परिणामतः नाड़ियों का शुद्धीकरण होता है तथा मौलिक और मानसिक स्थिरता प्राप्ति होती है। इसमें की जाने वाली कुम्भक प्रक्रिया द्वारा न केवल प्राण का नियन्त्रण होता है ; बल्कि मानसिक शक्तियों का भी विकास होता है।

प्राणायाम के अलावा बन्ध हठयोग की अन्य महत्वपूर्ण विधि है। इसे अन्तः शारीरिक प्रकिया कहा गया है। इनके अभ्यास से व्यक्ति शरीर के विभिन्न अंगों तथा नाड़ियों को नियन्त्रित करने में समर्थ होता है। इनके द्वारा शरीर के आन्तरिक अंगों की मालिश होती है। रक्त का जमाव दूर होता है। इन शारीरिक प्रभावों के साथ-साथ बन्ध सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त विचारों एवं आत्मिक तरंगों को प्रभावित कर चक्रों पर सूक्ष्म प्रभाव डालते हैं। यहाँ तक कि यदि इन का अभ्यास विधिपूर्वक जारी रखा जाय तो सुषुम्ना नाड़ी में प्राण की स्वतन्त्रता प्रवाह में अवरोध उत्पन्न करने वाली ब्रह्मग्रन्थि, विष्णुग्रन्थि व रुद्रग्रन्थि खुल जाती है और आध्यात्मिक विकास का पथ प्रशस्त होता है।

हठयोग की एक अन्य विधि के रूप में मुद्राएँ हैं। यह सूक्ष्म प्राण को प्रेरित, प्रभावित व नियन्त्रित करने वाली प्रक्रियाएँ हैं। इनमें से कई मुद्राएँ तो ऐसी हैं जिनके द्वारा अनैच्छिक शरीरगत प्रक्रियाओं पर नियंत्रण प्राप्त किया जा सकता है। मुद्राओं का अभ्यास साधक को सूक्ष्म शरीर स्थित प्राण.शक्ति की तरंगों के प्रति जागरूक बनाता है। अभ्यास करने वाला इन शक्तियों पर चेतन रूप से नियंत्रण प्राप्त करता है; फलतः व्यक्ति अपने शरीर के किसी अंग में उसका प्रवाह ले जाने या अन्य व्यक्ति के शरीर में उसे पहुँचाने की क्षमता प्राप्त करता है। हठयोग की ये सभी विधियाँ जीवन व्यापी प्राण के स्थूल व सूक्ष्म रूप को प्रेरित प्रभावित परिशोधित व नियंत्रित करती हैं। इनके प्रभाव से प्राण-प्रवाह में आने वाले व्यतिक्रम या व्याघात को समाप्त किया जा सकता है। इसके अनगिनत लाभ हैं।

योग के लाभ

"स्थिरं सुखं आसनं" पातञ्जलि योगसूत्र के अनुसार आसनों का अभ्यास करने में दो बातों पर बल दिया गया है। स्थिरता तथा सुख की अनुभूति। स्थिरता शरीर से सम्बन्धित है, जिसमें हड्डियाँ, मांसपेशियाँ, रक्तवाहिनी नाड़ियाँ, नाड़ी संस्थान ग्रन्थियाँ तथा निरन्तर कार्य करने वाले महत्वपूर्ण अंग शामिल हैं। इसके साथ ही शारीरिक प्रणालियाँ-पाचन, श्वसन व निष्कासन भी इसी के अंग हैं। इन सबका नियन्त्रण एवं इनका एकरूप होकर कार्य करना स्थिर शब्द के महत्व को दर्शाता है। इसके अतिरिक्त स्थूल शरीर के 5 तत्व - पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु व आकाश का सन्तुलन भी इस शब्द में निहित है। सुख का अनुभव मानसिक स्तर पर होता है। अतः यह सूक्ष्म शरीर. मन, बुद्धि, चित्त व अहंकार से सम्बन्धित है। प्रायः साधारण मनुष्य की मनःस्थिति डावाँडोल रहती है। बुद्धि अस्थिर रहती है। चित्त अनेक प्रकार के पूर्व संस्कार विद्यमान रहने से यह निर्मल नहीं रहता। इन सभी आन्तरिक अवस्थाओं को विकसित कर उत्कृष्ट बना देना ही सुख की उपलब्धि है।

हमारे ऋषि-मुनियों ने अपने आपको जानने के लिए एक ऐसी प्रणाली का विकास किया जिससे कि हम अपने शरीर व मन में समन्वय स्थापित करते हुए, अपने अन्दर के चैतन्य को जान सकें। वर्तमान युग में योग हमारे जीवन को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हुए दिखाई देते हैं।

योग के अभ्यास से परिवार-नियोजन की सम्भावना बढ़ती है। व्यक्तिगत स्वास्थ्य और सौन्दर्य बढ़ता है। कार्य करने की क्षमता बढ़ती है। निरोगता व सात्विक वृत्ति के कारण समाज पर बोझ नहीं बनता ; वरन् सहायक बनता है। सन्तुलित व सरल जीवन, कुरीतियों से बचाव, भेद-भाव रहित भावना, सुखद बुढ़ापा, सजग मस्तिष्क, एकाग्रता का समावेश, मानसिक तनाव का अभाव, सहिष्णुता, विवेक तथा सुख-शान्ति की उपलब्धियों के सहारे साधक समाज का ऋण उतारने की भावना से जीने लगता है। अतः सामाजिक पहलू से हठयोग की महत्वपूर्ण भूमिका है।

भारतीय संस्कृति का महापर्व- "कुम्भ"

- श्री दीपक कुमार (प्रवक्ता, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग)

कुम्भ को दुनिया का सबसे बड़ा धार्मिक और शान्तिपूर्ण आयोजन कहा जाता है। भारत के चार अलग-अलग स्थानों पर समय-समय पर आयोजित होने वाले कुम्भ मेले को 2017 में यूनेस्को की "मानवता की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत की प्रतिनिधि सूची" में शामिल किया गया है। कुम्भ का त्यौहार बाजार या मेले का त्यौहार नहीं है; बल्कि यह तप, ज्ञान और भक्ति का त्यौहार है। हर धर्म और जाति के लोग इस त्यौहार में एक दूसरे रूप में उपस्थित होते हैं और यह एक मिनी इण्डिया का रूप ले लेता है। कुम्भ भारतीय संस्कृति का ऐसा महापर्व है, आस्था का ऐसा सैलाब है जो सम्पूर्ण विश्व को अपनी ओर आकर्षित करता है।

कुम्भ एक ऐसी आध्यात्मिक परम्परा है जो अत्यन्त प्राचीन है। कुम्भ की महत्ता का वर्णन चीनी यात्री ह्वेनसांग ने अपनी यात्रा वृतान्त में भी किया है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि पूरे विश्व में कुम्भ आस्था का सबसे बड़ा जमावड़ा है, यह मेला दुनिया का सबसे बड़ा धार्मिक और सांस्कृतिक सम्मेलन है। भारत में कुम्भ मेला दुनिया में किसी भी अन्य धर्मसभा की तुलना में अधिक लोगों को आकर्षित करता है। यह हिन्दुओं की सामूहिक इच्छा को दर्शाता है। यह आध्यात्मिक मूल्यों में एक स्थायी विश्वास का प्रतिनिधित्व करता है, जो सार्वभौमिक आत्मा का हिस्सा बन जाते हैं और वे जाति, पन्थ, भाषा या क्षेत्र के सभी भेदों को भूल जाते हैं। यदि कोई भी विविधता में एकता देखना चाहता है, तो भारत के कुम्भ मेले की तुलना से कोई बेहतर उदाहरण नहीं हो सकता है।

"कुम्भ" का शाब्दिक अर्थ "कलश" है। कुम्भ के आयोजन के सूत्र पौराणिक कथाओं से मिलते हैं। पौराणिक कथाओं के अनुसार जब एक बार महर्षि दुर्वासा के शाप के कारण सभी देवताओं को अपनी शक्तिविहीन अवस्था को प्राप्त करना पड़ा, तब सभी देवता मिलकर भगवान् विष्णु के पास गए और उनसे प्रार्थना की। उसके पश्चात् भगवान् विष्णु ने भगवान् शिव से परामर्श करने के बाद समुद्र-मंथन करने का निर्णय लिया क्योंकि इसका यही एकमात्र उपाय था। उन्होंने कहा कि समुद्र- मन्थन के दौरान निकले हुए रत्नों को ग्रहण करने से देवताओं की शक्तियाँ उन्हें दुबारा प्राप्त हो सकती हैं। समुद्र- मन्थन के लिए मन्दार पर्वत को लिया गया और वासुकी नाग को मथनी बनाया गया। देवताओं और असुरों ने अपनी सम्मिलित शक्तियों से मथनी को खींचकर समुद्र मन्थन शुरू किया। सबसे पहले उस में विष निकला, जिसे भगवान् शिव ने ग्रहण कर पूरी सृष्टि का कल्याण किया और वह नीलकण्ठ कहलाए। देखते ही देखते उसमें से १४ अतिरिक्त रत्न निकले - जैसे उच्चैश्रवा घोड़ा, ऐरावत हाथी, धन्वन्तरि, कामधेनु गाय, कल्पवृक्ष, लक्ष्मी जी और बहुत सारे शुभ रत्न निकले और अन्त में अमृत का कलश निकला। अमृत के कलश को देवताओं के इशारे पर इन्द्र का पुत्र जयन्त लेकर भाग गया और उसके पीछे-पीछे सारे असुर भी भागे। यह भागदौड़ 12 दिन और 12 रात तक चली। इस भागदौड़ और खींचातानी के दौरान कलश कहीं गिर ना जाए इसलिए चन्द्रमा, सूर्य, शनिदेव और देवगुरु बृहस्पति ने मिलकर उस कलश की सुरक्षा को सुनिश्चित किया। कलश बारी-बारी से सभी के पास आता-जाता रहा जिस कारण कलश से अमृत की चार बूँदें पृथ्वी पर गिरी और जिन चार स्थानों पर यह बूँदें गिरीं उन स्थानों पर हम आज "कुम्भ" मनाते हैं। हरिद्वार (गंगा नदी के तट पर), प्रयागराज (गंगा, यमुना और अदृश्य सरस्वती के संगम पर), उज्जैन (क्षिप्रा नदी के तट पर) एवं नासिक (गोदावरी नदी के तट पर) - इन चार पवित्र स्थानों पर कुम्भ की परम्परा तभी से चली आ रही है। देवताओं एवं असुरों में कलश की लड़ाई 12 दिनों तक चली थी। माना जाता है कि देवताओं का 1 दिन, पृथ्वी के 1 वर्ष के समान होता है, इसी कारण यह कुम्भ का पावन पर्व हर 12 वर्ष पर आयोजित किया जाने लगा। ऐसा माना जाता है कि इन बूँदों के गिरने से इन स्थानों तथा नदियों को रहस्यमयी शक्तियाँ प्राप्त हो गयी हैं। इन नदियों की अपने-अपने क्षेत्र में बहुत अधिक मान्यता है। कहा जाता है कुम्भ के दौरान इन नदियों में स्नान करना, प्रायश्चित विधान या तपस्या का एक साधन है और यह उनके पापों को दूर करता है।

कुम्भ का ज्योतिषीय पहलू ग्रहों व सितारों और उनके निश्चित संरेखण से सम्बन्धित है। वेद के अनुसार सूर्य को एक आत्मा के रूप में या जीवन देने वाला माना जाता है। चन्द्रमा को मन का स्वामी माना जाता है। बृहस्पति या बृहस्पति ग्रह को देवताओं का गुरु माना जाता है। चूँकि राशि चक्र को पूरा करने के लिए बृहस्पति को पार करने में लगभग 12 साल लगते हैं, इसलिए कुम्भ को लगभग हर बारह साल बाद एक जगह पर मनाया जाता है। गृह-राशियों के विशेष संयोग पर, इस पर्व का आयोजन १२ वर्ष पर किया जाता है। कुम्भ मेले के स्थान की पुष्टि ज्योतिष द्वारा की जाती है। जब बृहस्पति कुम्भ राशि चक्र में प्रवेश करता है और सूर्य और चन्द्रमा क्रमशः मेष और धनु में होते हैं, तब हरिद्वार में कुम्भ आयोजित होता है। जब बृहस्पति वृष राशि चक्र में हो और सूर्य और चन्द्रमा मकर राशि में होते हैं, तब कुम्भ प्रयागराज में आयोजित किया जाता है। जब बृहस्पति सिंह राशि कर्क राशि में और सूर्य और चन्द्रमा कर्क राशि में प्रवेश करते हैं, तब कुम्भ नासिक में आयोजित किया जाता है। जब बृहस्पति सिंह राशि में होता है और सूर्य और चन्द्रमा मेष राशि में होते हैं, तब उज्जैन में कुम्भ आयोजित किया जाता है।

कुम्भ ने उत्तर भारत में अपना महत्व राजा हर्षवर्धन के शासनकाल में प्राप्त किया था। कहा जाता है कि कुम्भ को आदि शंकराचार्य द्वारा पूरे भारत में लोकप्रिय बनाया गया था। साथ ही साथ इसे मुगलकाल में भी बहुत सम्मानित किया गया था। 1856 ई0 के आसपास जब अंग्रेजों ने भारत पर अपना वर्चस्व बनाया, तब उन्होंने तीर्थयात्रा के साथ इस भीड़ को (कुम्भ मेले) को रोकने की बहुत कोशिश की। आस्था की इस आँधी को रोकना नामुमकिन था और तीर्थयात्रियों ने इस कुम्भ में कभी आना बन्द नहीं किया, बल्कि इसके विपरीत देश के साथ-साथ दुनिया के सभी कोनों से लोग इस कुम्भ में आते रहे और भविष्य में आते रहेंगे।

भारत का कुम्भ मेला धार्मिक महत्व, आध्यात्मिक उत्साह और सामूहिक अपील में श्रेष्ठ है; क्योंकि इसका कोई भी विज्ञापन जारी नहीं किया जाता है, कोई प्रचार नहीं किया गया है और इसके लिए कोई निमन्त्रण जारी नहीं किया गया है। यात्राओं में असुविधा, मौसम के विकार और भौतिक एवं संसाधनीय लाभ के अभाव के बावजूद भी, लोग इस मण्डली से जुड़ते हैं। जीवन के सभी क्षेत्रों- अमीर और गरीब, जवान और बूढ़े, पुरुषों और स्त्रियों, सन्तों और विद्वानों, कलाकार और कारीगर, सभी यहाँ मोक्ष प्राप्ति की आशा से इकट्ठा होते हैं। लाखों हिन्दुओं के लिए, गंगा सिर्फ एक जीविका, जीवन समर्थित नदी नहीं है यह साक्षात् देवी हैं। पावन नदी में स्नान करना, देवी-देवताओं के दर्शन करना, पवित्र जल का आचमन करना, यह सभी हिन्दुओं की महान् इच्छायें होती हैं। शास्त्रों के अनुसार, जो लोग कुम्भ मेले में "भाग लेते हैं" और उसमें "स्नान" करते हैं वे अस्थायी बन्धनों से मुक्त हो जाते हैं और आध्यात्मिक मोक्ष प्राप्त करते हैं।

सन् 2021 का हरिद्वार में आयोजित महाकुम्भ पहले के कुम्भों से कई मायनों में अलग है। इस बार का कुम्भ अवसर से ज्यादा चुनौतियों से परिपूर्ण है। इस बार का कुम्भ 12 वर्ष

की अपेक्षा 11 वर्ष के बाद आयोजित हो रहा है तथा कोरोना महामारी के चलते इस बार के महाकुम्भ की अवधि को 4 माह से घटाकर एक माह कर दिया गया है। कोरोना महामारी के चलते शासन और प्रशासन के विभिन्न नियम तथा दिशा निर्देशों के चलते अनुमानित श्रद्धालुओं की संख्या में भारी गिरावट आयी है।

लोगों में हताशा और निराशा है और जो लोग आ रहे हैं उन्हें मास्क तथा कोरोना नेगेटिव रिपोर्ट लाने के आदेश भी दिये गये हैं। अगर अतीत के पन्नों का स्मरण करें तो आज से पहले कुम्भ कभी भी नकाबपोश नहीं हुआ; लेकिन यह 2021 का कुम्भ, इतिहास का पहला कुम्भ मेला बनने जा रहा है, जो नकाबपोश होगा। वर्ष 2021 में कुम्भ महापर्व का आयोजन हरिद्वार में 1 अप्रैल से 28 अप्रैल तक किया गया है। कोरोना वायरस महामारी को देखते हुए इसकी अवधि 28 दिनों तक सीमित रखने का निर्णय किया गया है। यह मेला शिक्षा, सन्तों द्वारा धार्मिक प्रवचनों, भिक्षुओं का सामूहिक भोजन और गरीबों, आम इन्सान के मनोरञ्जन के साथ- साथ सामुदायिक वाणिज्य का उत्सव भी है। कुम्भ-त्यौहार पर विभिन्न प्रकार की भाषाओं, परम्पराओं, संस्कृतियों, पहनावों, भोजन और जीवन जीने के तरीकों को भी देखा जा सकता है।

यह आश्चर्यजनक है कि करोड़ों लोग बिना किसी आमन्त्रण के कुम्भ पर्व में आते हैं। साथ-साथ निवास करते हैं। परस्पर सहकार और साहचर्य की नयी कहानी लिखते हैं और सामूहिकता के इस महापर्व को मनाने के पश्चात् एक सुखद शान्ति और आप्तकाम के भाव के साथ अपने-अपने घर लौट जाते हैं। दिव्य कुम्भ की सुरभित स्मृतियों को अपने साथ समेटे हुए, वह अगले कुम्भ के भी सपने सँजोते होंगे। मन, वाणी और कर्म से कुम्भ की इस चलती फिरती प्रयोगशाला में आने को हर एक का मन होता ही है।

सफलता के सोपान

जो गलता बीज मिट्टी में, वही अंकुर है बन पाता,
सहकर ताप-शीतलता ही पादप वृक्ष बन जाता,
जो प्रतिपल सीख है लेता, न डरता है विफलता से,
वही मानव वरण करता विजयश्री का सफलता से ।

जो बढ़कर थाम लेता है स्वयं पतवार हाथों से,
जो डरता है नहीं तूफान से या झंझावातों से,
लहरें भी पराजित होती हैं मन की सबलता से,
वही मानव वरण करता विजयश्री का सफलता से ।

जिसका लक्ष्य आँखों में सतत और कर्म में दृढ़ता,
उसी का है सफल जीवन वही मानक नए गढ़ता,
जो पीकर आँसुओं का जल नहीं रोता विकलता से,
वही मानव वरण करता विजयश्री का सफलता से ।

जो डरकर है नहीं रुकता न अवरोधों से घबराता,
उसकी राह का अवरोध स्वतः सोपान बन जाता,
जिसके मन, वचन और कर्म तीनों मुक्त हैं छल से,
वही मानव वरण करता विजयश्री का सफलता से ।

- श्री सुधीर भारद्वाज,
प्रमुख- उद्यान विभाग, शान्तिकुञ्ज

इस सोशल डिस्टेंसिंग ने कितना कुछ हमसे छीना है

दुनिया की नई रीति नीति में, अब हम सबको जीना है,
इस सोशल डिस्टेंसिंग ने, कितना कुछ हमसे छीना है

एक समय था जब बेटी, दहलीज पर कदम रखती थी,
दौड़ कर अपनी माँ के, सीने से सहज लग जाती थी,
चूम कर बेटी का माथा, माँ के सीने में ठण्डक आती थी,
माँ तो अब भी वैसी ही है, पर बेटी को नई रीति से जीना है,
इस सोशल डिस्टेंसिंग ने कितना कुछ हमसे छीना है

नाती पोते के माथे का चुम्बन, दादी को खुश कर जाता था,
अरसों बाद मिलने की टीस को, पल भर में हर जाता था,
अब तो बच्चे भी दादी को, डिस्टेंसिंग का पाठ पढ़ाते हैं,
दादी को बच्चों से दूरी का, यह कड़ुआ घूँट भी पीना है,
इस सोशल डिस्टेंसिंग ने, कितना कुछ हमसे छीना है

पापा, भैया के सीने से, जब भी मैं लग जाती थी,
ढेरों आशीष, दुआओं की, सौगात संग ले आती थी,
और माँ की साड़ियों में सजकर, खुद पर मैं इतराती थी,
पर दुनिया की नई रीति ने, मेरा यह हक़ भी छीना है,
इस सोशल डिस्टेंसिंग ने, कितना कुछ हमसे छीना है

अब बुआ के आते ही बच्चे, खुशी से लिपट नहीं पाते हैं,
एक ही पल में जैसे, कितने अजनबी हो जाते हैं
बुआ मेरे लिए क्या लाई हो, ये अब नहीं पूछा जाता है,
क्या इस बेरुखेपन में ही, अब हम सबको जीना है,
इस सोशल डिस्टेंसिंग ने, कितना कुछ हमसे छीना है

- डॉ. आरती कैवर्त 'रितु'
(प्रवक्ता, वैज्ञानिक अध्यात्मवाद विभाग)

यह गुरुधाम हमारा है

हम सुधरेंगे युग सुधरेगा, यह उद्घोष हमारा है।
हम बदलेंगे युग बदलेगा, यही हमारा नारा है।।
शान्तिकुञ्ज अति प्यारा है, यह गुरुधाम हमारा है।।

सप्त ऋषियों की तपोभूमि है, माँ गायत्री धाम है।
हिमगिरि की छाया में स्थित,गंगा गोद ललाम है।।
शान्तिकुञ्ज चैतन्य तीर्थ से, बही ज्ञान की धारा है।
हम बदलेंगे युग बदलेगा, यही हमारा नारा है।।

युग ऋषि के तप की ऊर्जा से, युग तीर्थ आलोकित है।
देवों की यह दिव्य भूमि है, माँ गंगा से सिंचित है।।
ज्ञान क्रान्ति की गंगोत्री यह, शान्तिकुञ्ज अति प्यारा है।
हम बदलेंगे युग बदलेगा, यही हमारा नारा है।।

यज्ञ योग अनवरत हो रहा, मानव के कल्याण को।
हवन यहाँ का नित्य कर्म है, सद्गुण के उत्थान को।।
शान्तिकुञ्ज गुरुकुल है पावन, यह युगतीर्थ हमारा है।
हम बदलेंगे युग बदलेगा, यही हमारा नारा है।।

अखण्ड दीप की पावन ज्योति, प्राण प्रवाह फैलाती है,
युग ऋषि के अंशज श्रद्धेया, जीजी प्यार लुटाती हैं।।
कोटि कोटि गायत्री परिजन, का पावन गुरुद्वारा है।
हम बदलेंगे युग बदलेगा, यही हमारा नारा है।।

माताजी की दिव्य वाणी ही, नव उत्साह जगाती है।
गुरुवर के आशीर्वचनों से, शिष्य धन्य हो जाते हैं ।।
युग निर्माण को सार्थक करता, यह परिवार हमारा है
हम बदलेंगे युग बदलेगा, यही हमारा नारा है।।

- श्री उमेश यादव
(ई. एम. डी. विभाग, शान्तिकुञ्ज)

फिर मत रहियो आँखें फेरे

क्या माँगें हम प्रभु तुमसे।
आशा के दीपक बुझते।
हम तो सदा सहारे तेरे।
फिर मत रहियो आँखें फेरे।

जग में जो जैसा करता है, फल उसको वैसा मिलता है।
जीवन में नेक काम करो तो, शान्ति भक्ति से मन रचता है।
पूजन अर्पण करें सवेरे।
फिर मत रहियो आँखें फेरे।
जब तक सासें चलती रहतीं, तब तक माया फूले फलती।
क्षमा माँगते नित्य प्रति हम, हो जाए यदि कोई गलती।
तुम दाता हम याचक ठहरे।
फिर मत रहियो आँखें फेरे।

हर इच्छा स्वीकार तुम्हारी।
अब न परीक्षा लो त्रिपुरारी।
भक्ति से शक्ति पायी सदा ही, पर ऐसा लगता अब मैं हारी।
तुमने थामा हर एक मोड़ पर, ध्यान करें हम हाथ जोड़कर।
तुम हरदम देने वाले कहाते, हम तो हैं याचक कृष्ण मुरारी।
जीवन सुख दुःख की परिक्रमा, भूल हुई यदि कर दो हमें क्षमा

मन में हृदयंगम भाव गहरे।
फिर मत रहियो आँखें फेरे।

- डॉ. अमृता शुक्ला
(टाटीबन्ध,रायपुर)

नवयुग का जमाना

महाकाल ने धरती पर नवयुग लाने को ठाना है।
मानवीय मूल्यों पर आधारित आ रहा जमाना है।

प्रलयचक्र चल रहा यहाँ पर
हर अनीति मिट जानी है
दुराचरण दुर्भाव द्वेष की
अब तक चली कहानी है
गुरुवर की मृदु छाया में जग को मिला ठिकाना है।
मानवीय मूल्यों पर आधारित आ रहा जमाना है।

दया प्रेम करुणा का जीवन
देता कहाँ दिखाई है
संवेदन के स्वर दुनिया में
पड़ते कहाँ सुनाई हैं
स्नेह और सौजन्य शीलता का आचरण बनाना है।
मानवीय मूल्यों पर आधारित आ रहा जमाना है।

तुम देवों के देव पूज्यवर
छवि आपकी न्यारी है
इस युग में सतयुग लाने की
केवल शपथ तुम्हारी है
प्रज्ञा के अवतार पूज्यवर सुखद तुम्हारा आना है।
मानवीय मूल्यों पर आधारित आ रहा जमाना है।

- श्री शोभाराम शशांक

Kumbh

An Untold Saga

Music of perpetual guitar
Observing a shooting star
Clinching moments for soul
Kumbh- an eternal goal

Body Mind synchronize
Puffing indiscernible device
Responsive divine vibes
Kumbh – An ingenuous dice

Absorb Intuitive rhyme
Experience Godly mime
Fumigate the humble zeal
Kumbh – An unscathed feel

Captivate Nectar drops
Enlighten human crops
Listen Maa Ganga Raga
Kumbh – An untold Saga

Countless Saint and Nagas
Soothing Fumes Dhuni Akharas
Scatter on imaginable mile
Kumbh – An invincible smile

Gaze off Mahamandleshwar
An approachable Parmeshwar
Emotion, sentiments on ride
Kumbh – An everlasting pride

Piousness flicker around
Appear Heaven on ground
Figure out Why God on feet
Kumbh – An unprecedented meet

- Prof. Abhay Saxena

Dev Sanskriti Vishwavidyalaya, Gayatrikunj-Shantikunj, Haridwar

www.dsvv.ac.in

- Recognized by the UGC
  (under section 2(f) to the UGC act, 1956)
- ISO 9001:2015 Certified
- First State private University of Uttarakhand
- Privately sponsored by Vedmata Gayatri Trust
  (No financial aid from any Government agency)
- NAAC Accredited University
- Member of Association of Common Wealth Universities.
- Member of International Council of Professional Therapists (ICPT), London
- Knowledge partner of Ministry of Tourism
- Invited member of Swachh Bhaarat Abhiyaan
- Core committee member for celebrating International Day of Yoga
- Recipient of the renowned Erasmus+ Scholarship
- Host of Asia's first Centre for Baltic Culture and Studies

DEV SANSKRITI
VISHWAVIDYALAYA

Recognized by UGC,
Accredited by NAAC and
Certified by ISO 9001:2015